महावीर-निर्वाण का ढाई हजारवाँ मंगल-वर्ष

सर्वज्ञता की अद्भुतता

आत्मा का सर्वज्ञस्वभाव है, उसकी सर्वज्ञता की अद्भुत महिमा कुन्दकुन्दस्वामी ने प्रवचनसार में प्रसिद्ध की है–

- सर्वज्ञता की अद्भुतता को जाननेवाला राग में अद्भुतता नहीं मानता।
- सर्वज्ञता की अद्भुतता को जाननेवाला उसी में जायेगा कि जिसमें से सर्वज्ञता आती है।
- सर्वज्ञता की अद्भुतता को जाननेवाला राग से भिन्न होकर ज्ञानरूप हो जाता है।
- सर्वज्ञता की अद्भुतता जाननेवाले को अपने में चैतन्य का चमत्कार दिखता है।
- सर्वज्ञता की अद्भुतता जाननेवाले को विश्व के किसी भी पदार्थ में आश्चर्य नहीं रहता।
- सर्वज्ञता की अद्भुतता जाननेवाले को सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान होता है।
- सर्वज्ञता की अद्भुतता जाननेवाले को आत्मा में भवअंत की झंकार आ जाती है।
- सर्वज्ञता की अद्भुतता जाने, उसे ही अरिहंत व सिद्ध की भक्ति होती है।
- सर्वज्ञता की अद्भुतता जाने, उसे अपना पूर्ण आत्मा प्रतीति में आता है।
- सर्वज्ञता की अद्भुतता जिसने जानी, उसी ने सर्वज्ञ की वाणी को जानी है।
- सर्वज्ञता की अद्भुतता जाने, उसको ही मोक्षतत्त्व की श्रद्धा होती है।

अहो, सर्वज्ञता सुंदर है, कल्याणरूप है, अनुपम एवं अद्भुत है।
और वह मेरा स्वभाव ही है।

तंत्री–**पुरुषोत्तमदास शिवलाल कामदार** * संपादक : **ब्रह्मचारी हरिलाल जैन**
वीर सं० 2500 आश्विन (चन्दा : चार रुपये) वर्ष 30 : अंक 6

वीर सं. 2500
आश्विन
नवम्बर 1974

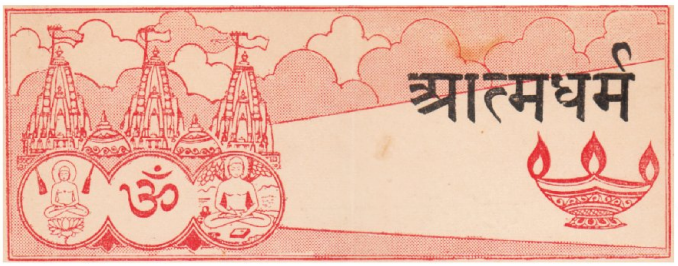

वर्ष 30 वाँ
अंक 6
[354]

सम्पादकीय

श्री महावीर प्रभु के मोक्ष के यह महान उत्सव में, अवश्य ही वीरप्रभु के प्रत्येक भक्त के अंतर में अपने आत्महित के लिये कुछ न कुछ करने की सुंदर भावनायें जगेगी, और महावीरप्रभु के प्रति भक्तिप्रवाह का पूर आयेगा।

यह सारा ही वर्ष, एवं इसके बाद भी सदाकाल, हमारा जीवन तथा जीवन का हर एक कार्य ऐसा उत्तम होना चाहिए कि स्वयं अपने को ही ऐसे गौरव के साथ संतोष हो जाये कि—'मैं अपने भगवान के कहे हुए उत्तम मार्ग में सुशोभित हो रहा हूँ; भगवान के दिखाये हुए मार्ग में मैं आनंद से चल रहा हूँ; भगवान के भक्त को शोभे, ऐसा ही मेरा जीवन है।' बुंधुओं! उत्तम सदाचारयुक्त-ज्ञानयुक्त ऐसा सुंदर जीवन जीने की जिम्मेदारी यदि आप लेओगे, तब ही महावीर भगवान का सच्चा उपकार, और उनके मोक्ष का सच्चा उत्सव आप मनाा सकेंगे। अन्यथा अकेले धन की धामधूम से सच्चा उत्सव नहीं हो सकेगा।

कैसे हैं हमारे भगवान महावीर? ('थे' ऐसा न कह करके 'है' ऐसा कहा, क्योंकि अभी सिद्धालय में विद्यमान ही हैं।) पहले संसारदशा में वे कैसे थे? बाद में उन्होंने मोक्षमार्ग को किसप्रकार साधा? और अभी मोक्ष में केसे सुशोभित हो रहे हैं? यह हमें पहिचानना चाहिए। (उनका संक्षिप्त वर्णन इसी अंक में आप पढ़ेंगे।) ये सब पहचानकर, उनमें से हमें अपने जीवन में क्या करनेयोग्य है? उसका विचार करना चाहिए। अभी संसार में चल रहे हलाहल पापों-हिंसा-असत्य-चोरी-सिनेमा तथा धन के परिग्रह के पीछे पागलपना, ये सब नरक के एजेन्टों के सामने एकवर्ष तक तो बिलकुल मत देखना... एक वर्ष में उनका संग छोड़के वीरप्रभु के साथ ऐसी पक्की मित्रता कर लेना कि जीवन में फिर कभी भी वे पाप तुम्हारे नजदीक में भी न आ सकें। अरे रे! पाप में डुबे रह करके मुक्ति के उत्सव में कौन भाग ले सकेगा? अतः वीरपुत्रो! ध्यान रखना, भगवान के ऐसे सुंदर उत्सव का प्रसंग इस जीवन में दूसरी बार आने का नहीं। अवसर मत चुकिजो! 'जय महावीर'

भगवान महावीर

ढाई हजारवें निर्वाण महोत्सव का मंगल प्रारंभ

भगवान महावीर मोक्ष पधारे, उस मंगल प्रसंग को इसी दीपावली पर ढाई हजार वर्ष पूर्ण होने जा रहा है; इसके उपलक्ष में दीपावली (दिनांक १३ नवम्बर, बुधवार) से प्रारंभ करके पूरे एक वर्ष तक समस्त भारत में जो अभूतपूर्व महान उत्सव हम मना रहे हैं, उसका मंगल प्रारंभ इसी दीपावली से हो रहा है। अहा, ऐसे मंगलोत्सव में किसको आनंद न होगा? दीपावली पर्व माने भगवान के मोक्ष का मंगल पर्व; वह हमें महावीर प्रभु के उत्तम आदर्शों का स्मरण कराकर मोक्षपंथ की प्रेरणा दे रहा है। श्री वीरप्रभु ने जो मार्ग दिखाया, उसी मार्ग में रत्नत्रय-दीपक प्रगट करके हम भी उन्हीं के पंथ पर चलें—ऐसी मंगल भावना के साथ यहाँ भगवान महावीर के जीवन का संक्षिप्त दिग्दर्शन कराया जाता है। (—संपादक)

मंगल दीपावली.... कार्तिक वदी अमावस का परीढ़ (चतुर्दशी की रात का अंतिम प्रहर।) आज सारा भारत अनोखे आनंद से यह दीपोत्सव मना रहा है। किसका है यह मंगल-दीपोत्सव ?

पावापुरी का पवित्रधाम हजारों दीपकों की जगमगाहट से आज दिव्य शोभा को धारण कर रहा है। वीरप्रभु के चरण समीप बैठकर के भारत के हजारों भक्तजनों वीरप्रभु के मोक्षगमन का स्मरण कर रहे हैं और उस पवित्र पद की भावना भा रहे हैं। अहा! भगवान महावीर ने आज संसारबंधन से छूटकर अभूतपूर्व सिद्धपद प्राप्त किया। अभी वे सिद्धालय में विराज रहे हैं। पावापुरी के जलमंदिर के ऊपर लोकशिखर पर महा आनंदमय सिद्धपद में प्रभु विराजमान हैं।

कैसा है यह सिद्धपद ? संतों के हृदयपट में उत्कीर्ण यह सिद्धपद का वर्णन करते हुए श्री कुन्दकुन्दस्वामी कहते हैं कि—

कर्माष्टवर्जित परम-जन्म-जरा-मरणहीन शुद्ध है।
ज्ञानादि चार स्वभाव है अक्षय अनाश अछेद्य है॥
अनुपम अतीन्द्रिय पुण्यपाप-विमुक्त अव्याबाध है।
पुनरागमनविरहित निरालंबन सुनिश्चल नित्य है॥

मात्र सिद्धदशा में ही नहीं, अपितु इसके पहले संसार अवस्था के समय में भी जीवों में ऐसा ही स्वभाव है, यह दर्शाते हुए कहते हैं कि—

जैसे जीवों है सिद्धिगत वैसे ही सब संसारी है।
वे भी जनम-मरणादिहीन अरू अष्टगुणसंयुक्त है॥
अशरीर अरू अविनाश है निर्मल अतीन्द्रिय शुद्ध है।
लोकाग्रस्थित है सिद्ध जैसे वैसे सब संसारी हैं॥

अहा, सिद्धपद ज्ञानियों को परम इष्ट है; अपने आत्मा के सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र द्वारा ऐसे सिद्धपद की प्राप्ति होती है; वह महान आनंदरूप है।

प्रभु महावीर ने आज के दिन ऐसा महिमावंत सिद्धपद प्राप्त किया। कैसे थे वे महावीर ?....ओर किसप्रकार से उन्होंने ऐसा सुंदर सिद्धपद प्राप्त किया ?—कि जिसके आनंद का उत्सव हजारों दीपकों से आज भी सारा भारत मना रहा है ?

हम सबकी तरह वे महावीर भगवान भी एक आत्मा है। हमारी तरह पहले वह आत्मा भी संसार में था। अरे! वह होनहार तीर्थंकर जैसा आत्मा भी, जब तक आत्मज्ञान नहीं किया, तबतक अनेक भव में संसारभ्रमण करता रहा।

❀ भगवान के पूर्वभवों का कथन ❀

इसप्रकार आत्मज्ञान के बिना भवचक्र में रुलते-रुलते वह जीव एकबार विदेहक्षेत्र में पुंडरीकिणीनगरी के मधुवन में पुरुरवा नामक भीलराजा हुआ; उससमय सागरसेन नामक मुनिराज को देखकर पहले तो वह उन्हें मारने को तैयार हुआ, किंतु बाद में उनको वनदेवता समझकर नमस्कार किया व उनके शांतवचनों से प्रभावित होकर के मांसादि के त्याग का व्रत ग्रहण किया। व्रत के प्रभाव से पहले स्वर्ग का देव हुआ; फिर वहाँ से अयोध्यापुरी में भरतचक्रवर्ती का पुत्र मरीची हुआ; चौबीसवें-अंतिम तीर्थंकर का जीव प्रथम तीर्थंकर का पौत्र हुआ। वहाँ अपने पितामह के साथ-साथ उसने भी दिगम्बरी दीक्षा तो ले ली, परंतु वह वीतराग-मुनिमार्ग का पालन नहीं कर सका, उससे भ्रष्ट हो करके उसने मिथ्यामार्ग का प्रवर्तन किया। मान के उदय से उसको ऐसा विचार हुआ कि जैसे भगवान ऋषभदादा ने तीर्थंकर हो करके तीन लोक में आश्चर्यकारी सामर्थ्य प्राप्त किया है, वैसे मैं भी अपना स्वतंत्र मत चलाकर उसका नेता होकर उनकी तरह इंद्र द्वारा पूजा की प्रतीक्षा करूँगा; मैं भी अपने दादा की तरह तीर्थंकर होऊँगा। (भावि तीर्थंकर होनेवाले द्रव्य में तीर्थंकरत्व की झनझनाहट उठीं।)

एकबार भगवान ऋषभदेव की सभा में भरत ने पूछा : प्रभो! क्या इस सभा में से भी कोई जीव आपके जैसा तीर्थंकर होगा? तब भगवान ने कहा—हाँ, यह तेरा पुत्र मरीचीकुमार इस भरतक्षेत्र में अंतिम तीर्थंकर (महावीर) होगा।

प्रभु की ध्वनि में अपने तीर्थंकरत्व की बात सुनते ही मरीची को अतीव आत्मगौरव हुआ। फिर भी अब तक उसने धर्म की प्राप्ति नहीं की थी। अरे! तीर्थंकरदेव की दिव्यध्वनि सुन करके भी उसने सम्यक् धर्म का ग्रहण नहीं किया। आत्मज्ञान के बिना वह जीव संसार के अनेक भवों में रुला।

महावीर का यह जीव, मरीची का अवतार पूर्ण करके ब्रह्मस्वर्ग का देव हुआ। इसके बाद मनुष्य व देव के अनेक भव में भी मिथ्यामार्ग का सेवन करता रहा; अंत में मिथ्यामार्ग के

सेवन के कुचक्र से समस्त अधोगति में जन्म धारण करते-करते त्रस—स्थावरपर्यायों में असंख्यात वर्षों तक तीव्र दुःख भोगा। ऐसे परिभ्रमण करते-करते वह आत्मा अतीव थकित व खेदखिन्न हुआ।

अंत में, असंख्यात भवों में घूमघूम के वह जीव राजगृही में एक ब्राह्मण का पुत्र हुआ। वह वेद-वेदांत में पारंगत होने पर भी सम्यग्दर्शन से रहित था, इसलिये उसका ज्ञान व तप सब व्यर्थ था। मिथ्यात्व के सेवनपूर्वक वहाँ से मर करके देव हुआ, वहाँ से फिर राजगृही में विश्वनंदी नामक राजपुत्र हुआ; और वहाँ एक छोटे से उपवन के लिये अपने भाई की मायाजाल देख के वह विरक्त हुआ और संभूतस्वामी के पास जैनदीक्षा ले ली। वहाँ से निदान के साथ आयु पूर्ण करके स्वर्ग में गया, और वहाँ से भरतक्षेत्र के पोदनपुरनगरी में बाहुबलीस्वामी की वंशपरंपरा में त्रिपृष्ठ नाम का अर्धचक्री (वासुदेव) हुआ; और तीव्र आरंभपरिग्रह के परिणाम से अतृप्तपन से ही मरकर वहाँ से सातवीं नरक गया। अरे! उस नरक के घोर दुःखों की क्या बात? संसार-भ्रमण में रुलते हुए जीव ने अज्ञान से कौन-कौन से दुःख नहीं भोगे होंगे!!

महान कष्ट से असंख्यात वर्षों की यह घोर नरकयातना की वेदना पूर्ण करके वह जीव गंगा किनारे सिंहगिरि के ऊपर सिंह हुआ, फिर वहाँ से धीकती अग्नि के समान प्रथम नरक में गया... और वहाँ से निकलकर जंबुद्वीप के हिमवन पर्वत पर देदीप्यमान सिंह हुआ.... महावीर के जीव ने इस सिंहपर्याय में आत्मलाभ प्राप्त किया। किस तरह वह आत्मलाभ पाया-यह प्रसंग देखिये—

❀ सिंहपर्याय में सम्यग्दर्शन ❀

एक बार वह सिंह क्रूरता से हिरन को फाड़कर खाता था। उसी समय आकाशमार्ग से जाते हुए दो मुनियों ने उसको देखा, और 'यह जीव होनहार महावीर तीर्थंकर है' ऐसे विदेह के तीर्थंकर के वचन का स्मरण करके, दयावश आकाशमार्ग से नीचे आकर सिंह को धर्म का संबोधन करने लगे : अहो, भव्य मृगराज! इसके पहले त्रिपृष्ठवासुदेव के भव में तूने बहुत से वांछित विषय भोगे, एवं नरक के अनेकविध घोर दुःख भी अशरणरूप से आक्रंद कर करके तूने भोगे; उस समय चहुं ओर शरण के लिये तूने पुकार की, किंतु तुझे कहीं भी शरण न मिला।

अरे! अब भी तू क्रूरतापूर्वक पाप का उपार्जन क्यों कर रहा है ? घोर अज्ञान के कारण अब तक तूने तत्त्व को नहीं जाना, और बहुत दुःख पाया। इसलिये अब तू शांत हो... और इस दुष्ट परिणाम को छोड़! मुनिराज के मधुरवचन सुनते ही सिंह को अपने पूर्व भवों का ज्ञान हुआ, नेत्रों से अश्रुधारा बहने लगी... परिणाम विशुद्ध हुए। तब मुनिराज ने देखा कि अब इस सिंह के परिणाम शांत हुए हैं और वह मेरी ओर आतुरता से देख रहा है, इसलिये अभी अवश्य वह सम्यक्त्व का ग्रहण करेगा।

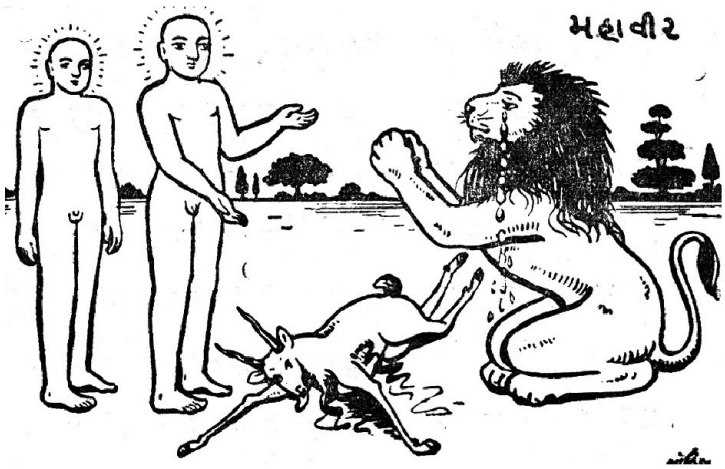

ऐसा सोचकर मुनिराज ने उसको शांत चैतन्यस्वरूप की अपार महिमा दिखायी, और पुरुरवा भील से लेकर अनेक भव दिखाकर के कहा कि रे शार्दूलराज! अब दशवें भव में तू भरतक्षेत्र का तीर्थंकर होगा – ऐसा हमने श्रीधर तीर्थंकर के मुख से सुना है। इसलिये हे भव्य! तू मिथ्यामार्ग से निवृत्त हो और आत्महितकारी ऐसे सम्यक्मार्ग में प्रवृत्त हो।

महावीर का जीव (सिंह) मुनिराज के वचन से तुरंत ही प्रतिबोधित हुआ। उसने अत्यंत भक्ति से बारबार मुनियों की प्रदक्षिणा की और उनके चरणों में नम्रीभूत हुआ। रौद्ररस के स्थान में तुरंत ही शांतरस प्रगट किया। और उसने तत्क्षण ही सम्यक्त्व प्राप्त किया। इतना ही नहीं, उसने निराहारव्रत भी धारण किया। अहा! सिंह का शूर-वीरपना सफल हुआ। शास्त्रकार कहते हैं कि उस समय उसने ऐसा घोर पराक्रम प्रगट किया कि, यदि तिर्यंच-पर्याय में मोक्ष होता तो अवश्य ही वह मोक्ष पा जाता! सिंहपर्याय में समाधिमरण करके वह सिंहकेतु नाम का देव हुआ।

वहाँ से धातकीखंड के विदेहक्षेत्र में कनकोज्वल नाम का राजपुत्र हुआ; अब धर्म के द्वारा वह जीव मोक्ष की नजदीक में पहुँच रहा था। वहाँ वैराग्य से संयम धारण करके सातवें स्वर्ग में गया। वहाँ से साकेतपुरी (अयोध्या) में हरिषेण राजा हुआ और संयमी हो करके स्वर्ग में गया। फिर धातकीखंड में पूर्व विदेह की पुण्डरीकिणीनगरी में प्रियमित्र नामक चक्रवर्ती राजा हुआ; उसने क्षेमंकर तीर्थंकर के सान्निध्य में दीक्षा ली और सहस्त्रार स्वर्ग में सूर्यप्रभदेव हुआ। वहाँ से जंबुद्वीप के छत्तरपुरनगर में नंदराजा हुआ और दीक्षा लेकर, उत्तम संयम का पालन कर, ११ अंग का ज्ञान प्रगट करके, दर्शनविशुद्धिप्रधान सोलह भावनाओं के द्वारा तीर्थंकरनामकर्म बाँधा और संसार का छेद किया; उत्तम आराधनासहित अच्युतस्वर्ग के पुष्पोत्तर विमान में इंद्र हुआ।

वहाँ से चयकर महावीर का वह महान आत्मा, भरतक्षेत्र में वैशाली के कुंडलपुर के महाराजा सिद्धार्थ के यहाँ अंतिम तीर्थंकर के रूप में अवतरित हुआ... प्रियकारिणी माता के यह 'वर्द्धमान' पुत्र ने चैत्र शुक्ला १३ के दिन संसार के जन्म का अन्त कर इस भरतभूमि को पावन की। एक बार वीर वर्द्धमान बालतीर्थंकर को दूर से देखते ही संजय व विजय नाम के दो मुनियों का सूक्ष्म संदेह दूर हुआ, इससे प्रसन्न होकर उन्होंने 'सन्मतिनाथ' नाम दिया। एकबार संगम नाम के देव ने भयंकर सर्प का रूप धारण करके उस बालक की निर्भयता की व वीरता की परीक्षा करके भक्ति से 'महावीर' नाम दिया। तीस वर्ष की कुमारवय में तो उनको जातिस्मरणज्ञान हुआ और संसार से विरक्त हो करके मागशर कृष्णा दशमी को वे स्वयं दीक्षित हुए। उनको मुनिदशा में उत्तम खीर से सबसे प्रथम आहारदान कुलपाक नगरी के राजा ने दिया। उज्जैननगरी के वन में रुद्र ने उनके ऊपर घोर उपद्रव किया, परंतु ये वीर मुनिराज निजध्यान सें किंचित् भी न डिगे सो न ही डिगे। इससे नम्रीभूत हो रुद्र ने स्तुति की व अतिवीर (महाति-महावीर) ऐसा नाम रखा।

कौशाम्बी नगरी में बंधनग्रस्त सती चंदनबाला को ये पाँच मंगल नामधारक प्रभु के दर्शन होते ही उनकी बेड़ी के बंधन टूट पड़े और उसने परम भक्ति से प्रभु को आहारदान दिया। साढ़े बारह वर्ष मुनिदशा में रह करके, वैशाख शुक्ला दशमी के दिन सम्मेदशिखरजी तीर्थ के नजदीक जृम्भिक गाँव की ऋजुकूला सरिता के तीर पर क्षपकश्रेणी चढ़कर प्रभु ने केवलज्ञान

प्रगट किया। वे अरिहंत सर्वज्ञ भगवान राजगृही के विपुलाचल पर पधारे।

६६ दिन के बाद, श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से दिव्यध्वनि द्वारा धर्मामृत की वर्षा प्रारंभ की; उसे झेलकर इंद्रभूमि गौतम आदि अनेक जीवों ने प्रतिबोध पाया। वीरनाथ की धर्मसभा में ७०० तो केवली भगवंत थे; सब मिलके १४००० मुनिगण व ३६००० अर्जिकायें थीं; एक लाख श्रावक व तीन लाख श्राविकायें थी, असंख्यदेव असंख्यात तिर्यंच थे। तीस वर्ष तक लाखों-करोड़ों जीवों को प्रतिबोध के वीर प्रभुजी पावापुरी नगरी में पधारे; वहाँ के उद्यान में योगनिरोध करके विराजमान हुए, व कार्तिक वदी अमावस्या के सुप्रभात में परम सिद्धपद को प्रगट करके सिद्धालय में विराजे; उस सिद्धप्रभु को नमस्कार हो।

अर्हंत सब ही कर्म के कर नाश इस रीतिसों,
उपदेश भी उसका ही दे, सिद्धि गये, नमूं उनको।
श्रमणों जिनों तीर्थंकरों सब सेय एक ही मार्ग को,
सिद्धि गये, नमूं उनको, निर्वाण के उस मांग को॥

(प्रवचनसार)

भगवान महावीर ने जब मोक्षगमन किया, उस वक्त चतुर्दशी की अंधेरी रात होने पर भी सर्वत्र एक चमत्कारिक दिव्य प्रकाश फैल गया था, और तीनों लोक के जीवों को भगवान के मोक्ष का आनंदकारी समाचार पहुंच गया था। देवेन्द्रों व नरेन्द्रों ने भगवान की मुक्ति का बड़ा भारी उत्सव किया... अंधकारमय रात्रि करोड़ों दीपकों से जगमगा उठी। करोड़ों दीपों की आवली से मनाया गया यह निर्वाण महोत्सव दीपावली पर्व के रूप में भारतभर में प्रसिद्ध हुआ। ईस्वी सन् से पूर्व ५२७ वर्ष पहले बना हुआ यह कल्याणक-प्रसंग आज भी हम सब दीपावली पर्व के रूप में आनंद से मनाते हैं। दीपावली यह भारतवर्ष का सर्वमान्य आनंदकारी धार्मिक पर्व है।

ऐसे इस दीपावली पर्व के मंगल प्रसंग पर वीरप्रभु की आत्मसाधना को याद करके हम भी उस वीरपथ पर चलें एवं आत्मा में रत्नत्रयदीप जलाकर अपूर्व दीपावली पर्व मनावें, यही भावना।

—००—

आत्मधर्म..... बनाम मेरा प्राण

हमारे आत्मधर्म के आद्य-संपादक माननीय रामजीभाई आज ९१ वर्ष की उम्रवाले हैं, वैसे ही ९०-९२ वर्ष की वयोवृद्ध उम्रवाले आत्मधर्म के एक मुमुक्षु पाठक भी आत्मधर्म को अपना प्राण समझकर लिखते हैं कि—आपके यहाँ से प्रकाशित आत्मधर्म-मासिक की २९ वर्ष तक की पूरी फाईलें हमारे पास संगृहीत हैं—आत्मधर्म क्या!—वो तो हमारी आत्मा है; हमने उसे किस तरह से संगृहीत करा है, वो हम ही जानते हैं। अब हमारी उम्र ९०-९२ साल की हो गई तो भी 'आत्मधर्म' हमारे जीव से छूटा नहीं, परंतु अब लाचारी से किसी को देना चाहते हैं। जो उनको सुरक्षित रखें। वो आत्मधर्म तो है ही परंतु हमारी आत्मा ही है; आत्मधर्म सुरखित स्थान पर पहुँच जाये तो हमारी आत्मा को शांति मिल जाये।

[पत्र लिखनेवाले सज्जन हैं—सनत चैनसुखदास जैन, ताजपुर (उज्जैन)];

[आत्मधर्म को अपने प्राण के समान गिनकर उसका पठन करनेवाले जिज्ञासु पाठकों की संख्या हजारों की है। ऐसे आत्मधर्म के प्रचार-प्रसार के लिये यदि १०-२० हजार का खर्चा हो जाये तो यह कौन-सी बड़ी बात है? उसकी पूर्ति के लिये हमारे हजारों जिज्ञासु साधर्मी तैयार ही बैठे हैं।]

❀ मुझे मोक्ष जाना है। ❀ मोक्ष दिखाओ... मोक्ष का मार्ग ❀

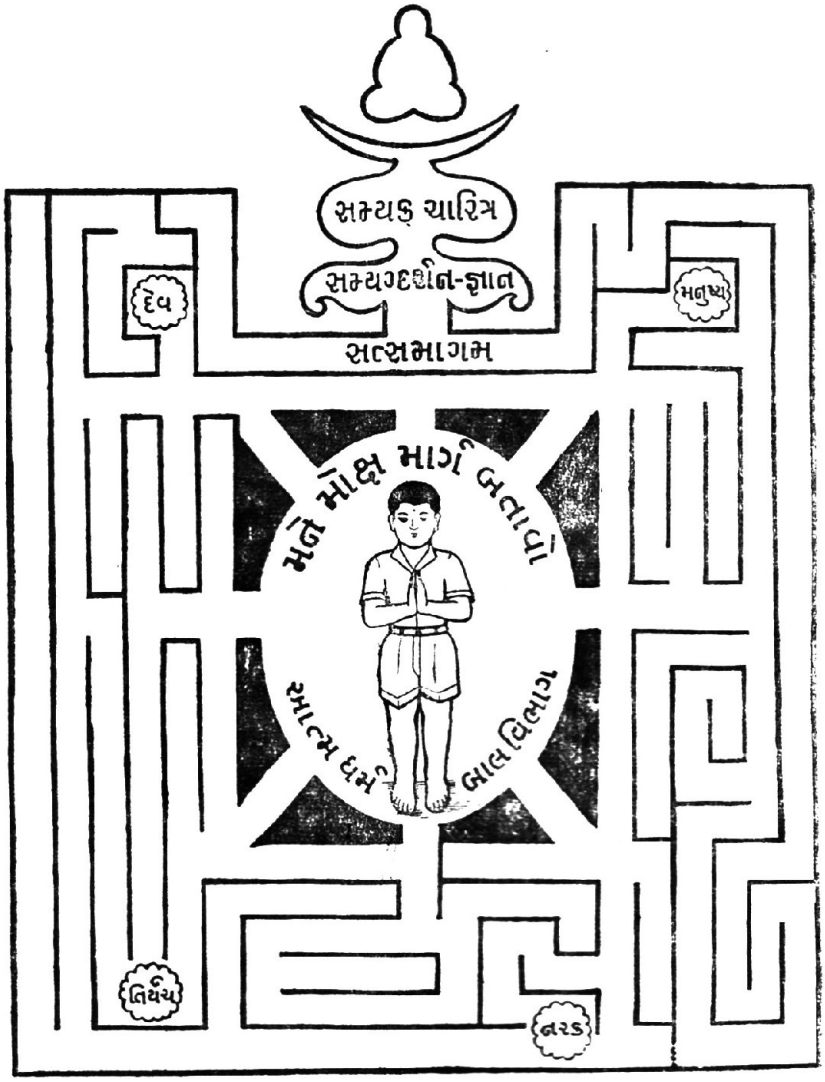

आओ बच्चों! यहाँ आपका एक मित्र आपसे पुकार रहा है कि मुझे मोक्ष का मार्ग दिखाओ... और इस संसारबंधन से छुड़ाओ! मार्ग तो खुला है, सो आप खोजकर दिखाओ। परंतु ध्यान रखना—चार कोने में चार गतियाँ हैं, कहीं गलती से उसमें नहीं रुक जाना। आप मोक्ष तक न पहुँचा सको तो कम से कम सम्यग्दर्शन तक तो अवश्य पहुँचाना... बाद का मार्ग तो बिल्कुल सरल है। बीच में जो बालक है वह शायद आप ही हों!

मोहक्षय करने का उपाय

जिनवाणी का सम्यक् अभ्यास, मोहनाश के लिये ब्रह्मास्त्र है। भावज्ञान द्वारा जिनवाणी की उपासना करने से मुमुक्षु के अंतर में आनंद की धारा उल्लसित होती है।

श्री जिनवाणी की परम महिमा दिखाकर, मुमुक्षु जीव को उसके सम्यक्-अभ्यास से आत्मप्राप्ति का शौर्य जगानेवाला यह प्रवचन पढ़कर जिज्ञासु जीव आनंदसहित आत्मप्रयत्न में उल्लसित होगा।

मुमुक्षु जीव 'सहृदय' है, इसलिये वह द्रव्यश्रुत के अभ्यास द्वारा ज्ञानी-संतों के हृदय का थाह लेकर उनके अंतर के शुद्धभावों को पहिचान लेता है; वह शब्दों में नहीं अटकता परंतु भावज्ञान के द्वारा ज्ञानी के हृदय के भीतर पहुँच जाता है। तब उसे आनंद की शांतरसधारा उछलती है।

-इसके लिये अंतर में आत्मा की लगन लगनी चाहिए। शास्त्राभ्यास का हेतु कहीं ऐसा नहीं कि शब्दों के सामने देखकर बैठे रहना; किंतु मुमुक्षु का हेतु तो यह है कि शास्त्र में जैसा कहा, वैसा अपना ज्ञानानंदस्वरूप आत्मा लक्ष में लेकर उसका स्वसंवेदन करना; और ऐसा चैतन्य का संवेदन होता जाये—यही सम्यक् शास्त्राभ्यास है; उसके फल में आनंद की प्राप्ति तथा मोह का नाश अवश्यमेव होता है। इस प्रकार मुमुक्षु को शास्त्राभ्यास कर्तव्य है।

[श्री प्रवचनसार गाथा ८६ से ९० के प्रवचन में से दोहन]

जिनशास्त्रतें प्रत्यक्ष-आदि से जानता जो अर्थ को।
तस मोह होता नाश निश्चय, शास्त्र समध्ययनीय है॥८६॥

देखो, यह मोह के नाश का उपाय! पहले ८० वीं गाथा में यह कहा कि—अरिहंतदेव

के शुद्ध द्रव्य-गुण-पर्याय की पहिचान से आत्मा की पहिचान होकर मोह का क्षय होता है। (-इस गाथा का सुंदर प्रवचन आपने आत्मधर्म के गतांक में पढ़ा।) अब यहाँ ८६ वीं गाथा में कहते हैं कि जिनशास्त्रों के अभ्यास से प्रत्यक्ष प्रमाण की मुख्यतापूर्वक पदार्थों को जानने से मोह का अवश्य नाश होता है; अतः शास्त्र सम्यक् प्रकार से अभ्यास करनेयोग्य है, अर्थात् शास्त्र में कहे हुए जीवादि तत्त्वों का सम्यक् स्वरूप जाननेयोग्य है।—ये दोनों (गाथा ८० तथा ८६ का) कथन एक-दूसरे से सापेक्ष है, उनमें कोई विरोध नहीं है।

सर्वज्ञ-अरिहंतदेव के द्रव्य-गुण-पर्याय की पहिचान करे, तब उनकी वाणी में शुद्ध आत्मा का स्वरूप कैसा दिखलाया है—उसका भी भावश्रुतज्ञान साथ में ही आ जाता है। अरिहंत भगवान के शुद्ध द्रव्य-गुण-पर्याय चेतनमय हैं—ऐसा जानने का कहा—वह कैसे जाना जाये?—सर्वज्ञ-उपदिष्ट आगम के भावश्रुतज्ञान से ही शुद्ध द्रव्य-गुण-पर्याय का ज्ञान होता है। ऐसे भावश्रुतज्ञान में आनंद की तरंगें उठती हैं, और उस ज्ञान के बल से मोह का जरूर नाश होता है।

सर्वज्ञ के स्वरूप का ज्ञान होते ही उनके कहे हुए आगम का ज्ञान भी हो जाता है; और सर्वज्ञ के आगम में जो कहा है, उसका सम्यक्रूप से अभ्यास करने पर उसमें सर्वज्ञ के स्वरूप का भी ज्ञान आ ही जाता है; इसप्रकार अरिहंतदेव के द्रव्य-गुण-पर्याय का ज्ञान, तथा आगम का ज्ञान, इन दोनों की परस्पर सापेक्षता है, एक के साथ में दूसरा रहता ही है।

सर्वज्ञदेव के कहे हुए पाँच-परमागम (समयसार, प्रवचनसार, पंचास्तिकाय, नियमसार तथा अष्टप्राभृत) यहाँ सोनगढ़ के परमागममंदिर में संगमरमर में तो टंकोत्कीर्ण हो चुके हैं, मुमुक्षु को तो उनका भाव अपने हृदय की ज्ञानशिला में लिख लेना चाहिए, तभी उनके भावों का सच्चा ज्ञान होने से मोह का नाश होकर अपूर्व मोक्षमार्ग प्रगट होता है। इसलिये आचार्यदेव कहते हैं कि—मोह का नाश करने के लिये सर्वज्ञ की वाणीरूप आगम का अभ्यास करो। किसप्रकार अभ्यास करना?—कि भावज्ञान के अवलंबन द्वारा दृढ़ीकृत सम्यक् परिणाम से अभ्यास करना; भावश्रुतज्ञान अंतर में स्वोन्मुख होता है; अतएव स्वलक्ष से जो जीव जिनवाणी का अभ्यास करता है, उसको तो पद-पद का ज्ञान करते-करते आनंदरस का संवेदन होता जाता है। इसलिये मुमुक्षुओं को सर्वज्ञोपज्ञ आगम का सम्यक् प्रकार से अभ्यास कर्तव्य है।

देखो, यहाँ सर्वज्ञोपज्ञ आगम का अभ्यास करने का कहा, उसमें बहुत गंभीरता है। प्रथम तो अभ्यास करनेवाले को सर्वज्ञ की प्रतीति है; उस सर्वज्ञ के कहे हुए आगम का अभ्यास माने उस आगम में जो वस्तुस्वरूप कहा है, उसका ज्ञान। आगम में क्या कहा है ?—

- **समस्त जिनागमों में वीतरागभाव को ही तात्पर्य कहा है।**
- **वीतरागता स्वद्रव्य के ही आश्रय से होती है।**
- **स्वद्रव्य का आश्रय उसके सम्यक् श्रद्धा-ज्ञानपूर्वक ही होता है।**
- **जिनशास्त्रों में कहीं पर भी राग-द्वेष को तात्पर्य नहीं कहा।**
- **परद्रव्य के आश्रय से जीव का कल्याण होने का नहीं कहा।**

श्री जिनवाणी कहती है कि आत्मा ज्ञानस्वरूप है; उसके द्रव्य-गुण-पर्याय तीनों ही ज्ञानस्वरूप से व्याप्त हैं; ज्ञान के साथ राग का या जड़ का मिलान नहीं है; ऐसे ज्ञानस्वरूप आत्मा को जानकर, श्रद्धा में लाकर, उसकी अनुभूति करना, सो मोक्षमार्ग है। इस तरह से स्वभावसन्मुख होनेरूप सत्य तात्पर्य समझकर जो जीव अंतर्मुख होता है, उसने ही शास्त्र के सच्चे भाव का अभ्यास किया है और उसका मोह अवश्य नष्ट होता है। परंतु शास्त्र सन्मुख के शुभराग को ही सर्वस्व समझकर जो उसमें अटक जाता है, उस जीव ने शास्त्र के भाव का अभ्यास नहीं किया, किंतु अपने राग का ही अभ्यास किया है। शास्त्र ने तो ऐसा कहा था कि हे जीव ! तू राग से भिन्न तेरे चैतन्यस्वरूप को देख, चैतन्य के स्वसंवेदनरूप प्रत्यक्ष ज्ञान से आत्मा को जान, तो तेरा मोह क्षय हो जायेगा। अब ऐसा न करके, उसके बदले में शास्त्र के प्रति राग-विकल्प में ही लाभ मानकर उसमें ही जो अटक जाये, उसने तो शास्त्र-आज्ञा से विरुद्ध क्रीड़ा की है। जो शास्त्राज्ञा के अनुसार वस्तुस्वरूप लक्ष में लेकर भावश्रुतज्ञान से सम्यक् क्रीड़ा (उल्लास के साथ बार बार मनन) करे, उसे तो पद-पद पर अपना स्वरूप राग से भिन्न, चेतनमय प्रतिभासित होता है और आनंद के फव्वारे उछलते हैं, तथा मोह का नाश हो जाता है।

वाह, जिनशास्त्र का अभ्यास किसप्रकार किया जाये ? और उसके फल में तत्काल ही कैसा आनंद आता है ?-यह बात आचार्यदेव ने यहाँ दिखलाई है; इसमें स्वसन्मुख भावश्रुत के अभ्यास की अद्‌भुत बात है।

भगवान सर्वज्ञदेव ने जो प्रत्यक्ष देखा, वही जिनागम में कहा है; इसलिये जिनागम

सर्वप्रकार से अबाधित है। ऐसे अबाधित प्रमाणरूप जिनागम को प्राप्त करके मुमुक्षु क्या करते हैं ?—कि उसमें क्रीड़ा करते हैं; उसमें क्रीड़ा करते-करते उसके घोलन से उन्हें विशिष्ट स्वसंवेदनशक्तिरूप संपदा प्रगट हो जाती है। उन सहृदयी भावुक-मुमुक्षु जीवों के अंतर में आनंद के फव्वारे उछालनेवाले ऐसे प्रत्यक्ष प्रमाण के द्वारा, तथा प्रत्यक्षपूर्वक के अनुमान-आगमादि प्रमाणों के द्वारा स्व-पर समस्त वस्तु का सत्य ज्ञान होने पर मोह का नाश हो जाता है। बस, यही है-मोह के नाश का उपाय।

❀ ज्ञान में क्रीड़ा ❀

मुमुक्षु जीव जिनवाणी को पाकर उसमें क्रीड़ा करता है अर्थात् जिनागम में आत्मा का जैसा स्वरूप कहा है, वैसा आनंदपूर्वक अभ्यास में लेकर निर्णय करता है, उसमें उसको बोझा नहीं लगता परंतु ज्ञान की मौज आती है, इसलिये 'क्रीड़ा करता है' ऐसा कहा है। पहले अज्ञान में राग की क्रीड़ा करता था, अब जिनागम के अभ्यास से ज्ञान की क्रीड़ा का प्रारंभ किया है। अंतर के वस्तुस्वरूप को जानते-जानते श्रुतज्ञान के अनंत प्रकारों के द्वारा नये-नये अद्भुत भाव प्रकट होते हैं, यही श्रुतज्ञान की केलि है; ऐसी ज्ञानक्रीड़ा के द्वारा मुमुक्षु जीव, भगवान अरिहंत के द्रव्य-गुण-पर्याय को, तथा परमार्थ से वैसे ही अपने आत्मा के परमार्थ स्वरूप को निश्चित कर लेता है; उसे यथार्थ वस्तुस्वरूप ज्ञान में आते ही आनंद के संवेदनसहित प्रत्यक्ष प्रमाणरूप सम्यग्ज्ञान प्रगट होता है और मोह नष्ट हो जाता है। जिनवचन के अनुसार वस्तुस्वरूप का सत्य ज्ञान होने पर दर्शनमोह टिक नहीं सकता।

सर्वज्ञदेव के चेतनस्वरूप द्रव्य-गुण-पर्याय को जानकर, उसके साथ अपने आत्मा के द्रव्य-गुण-पर्याय का मिलान करने से, राग तथा ज्ञान की अत्यंत भिन्नता का भान होता है और गुण-पर्यायों को द्रव्य में ही अभेद करके आत्मा का अनुभव होता है, उसी समय मोह का नाश होकर सम्यक्त्व होता है। (यह बात ८० वीं गाथा में दिखाई।) अब, उसीप्रकार सर्वज्ञ भगवान के आगम में द्रव्य-गुण-पर्यायस्वरूप स्व-परवस्तु का भिन्न-भिन्न स्वरूप जैसा कहा है वैसा, आत्मा के स्वसंवेदनरूप प्रत्यक्ष प्रमाण के द्वारा जानने से अवश्य मोह का नाश होता है और सम्यग्ज्ञान प्रगट होता है। अतः मुमुक्षु को मोहक्षय करने के लिये भावश्रुतज्ञान के अवलंबन द्वारा सम्यक् प्रकार से जिनागम का अभ्यास कर्तव्य है। (यह बात ८६वीं गाथा में कही।)

❀ प्रथम भूमिका में गमन ❀

'जिसने प्रथम भूमिका में गमन किया है... ऐसे जीव के मोह का क्षय होता है' ऐसा यहाँ कहा है, उसमें 'प्रथम भूमिका' का क्या अर्थ है?—जो अनादि से अज्ञानभूमिका में किया, उस रीति से नहीं किंतु उससे भिन्न रीति से धर्म का प्रारंभ करने के लिये जो तैयार हुआ है, वह जीव धर्म के प्रारंभ में प्रथम तो सम्यग्ज्ञान का अभ्यास करता है; उसको जिनवाणी में क्रीड़ा करने से लेकर मोह का क्षय होने तक बीच में क्या-क्या होता है, वह सब आचार्यदेव ने अलौकिक ढ़ंग से दिखाकर अनुभव का उपाय अत्यंत स्पष्ट बतलाया है। अब उसप्रकार से अपने अंतर में प्रयोग करके प्रयत्न के द्वारा आत्मा का साक्षात् अनुभव करना-यह मुमुक्षु का काम है।

मुमुक्षु के आत्मअनुभव करने के लिये जब 'प्रथम भूमिका में' गमन किया कि उसी समय अन्य सबसे चित्त को हटाकर, 'मेरा चैतन्यतत्त्व जिनागम में कैसा कहा है'-उसका शोधन करने के लिये भावज्ञान द्वारा जिनागम में क्रीड़ा करने लगता है; आत्मा के प्रति परम प्रेमपूर्वक अपूर्वभाव से उसका अभ्यास करता है। जैसा अनादि से कर रहा था, वैसा ही करे तो उसको 'प्रथम' नहीं कह सकते। 'प्रथम' का अर्थ तो ऐसा है कि अनादि से चल रही अशुद्ध परिणति से भिन्न प्रकार की नयी परिणति का प्रारंभ करता है... जिनागम ने जैसा आत्मस्वभाव कहा, वैसा लक्षगत करके ज्ञान को उसके सम्मुख ले जाता है; ऐसी नयी अपूर्व भूमिका का प्रारंभ राग के द्वारा नहीं परंतु भावश्रुतज्ञान की क्रीड़ा के द्वारा होता है।-मुमुक्षु जीव के अंतरंग-प्रयत्न की यह अपूर्व बात है।

❀ मुमुक्षु के विशिष्ट स्वसंवेदन-शक्तिरूप संपदा प्रकट होती है ❀

मुमुक्षु जीव ज्यों-ज्यों जिनवाणी में क्रीड़ा करता है, त्यों-त्यों उसकी विशिष्ट स्वसंवेदनशक्ति विकसित होती जाती है। 'यह मेरा चैतन्यभाव है; यह राग भाव है, सो चैतन्यजाति से भिन्न है'—इसप्रकार स्व-पर भावों की स्पष्ट भिन्नता उसके वेदन में आने लगती है; बारबार भेदज्ञान के अभ्यास के संस्कार से आत्मा में उण्ड़ा उतरने से ज्ञान में जो स्वसंवेदनशक्ति प्रगट होने लगी, उसे 'विशिष्ट' कही है। विशिष्ट कहने से सामान्य जानकारी की बात नहीं है, परंतु जो ज्ञान अंतर में आत्मा की ओर झुक रहा है तथा राग से अधिक होने

लगा है, वह विशिष्ट है। ऐसे विशिष्ट ज्ञानरूप स्वसंवेदनशक्ति ही मुमुक्षु की संपदा है। राग को संपदा नहीं कहते, स्वोन्मुखी ज्ञान ही संपदा है। ऐसी ज्ञानसंपदा प्रगट करके... स्व-पर तत्त्वों को यथार्थस्वरूप से जानता है। किसप्रकार जानता है? अपने आत्मा को तो स्वसंवेदन-प्रत्यक्ष-प्रमाण द्वारा अनुभवगम्य करके जानता है, तदुपरांत प्रत्यक्ष से अविरुद्ध ऐसे अन्य प्रमाणों के द्वारा समस्त तत्त्वों को यथार्थरूप से जानता है; तब ज्ञान में कोई विपरीतता नहीं रहती और मोह का गंज (दर्शनमोह) नष्ट हो जाता है।

❀ प्रत्यक्षप्रमाण सहृदय जीवों को आनंद का फव्वारा देनेवाला है ❀

यहाँ मुमुक्षु जीव सहृदय है, इसलिये संतों का कहा हुआ जो द्रव्यश्रुत, उसके अभ्यास से वह ज्ञानी संतों के हृदय की थाह लेकर उनके अंतर के शुद्धभावों को पहिचान लेता है; वह शब्दों में नहीं अटकता, परंतु भावज्ञान के द्वारा ज्ञानी के हृदय के भीतर पहुँच जाता है और उनके कहे हुए शुद्ध जीवादि तत्त्वों का स्वरूप सम्यक् परिणाम से जान लेता है। यह जानते ही उस सहृदय मुमुक्षु के अंतर में आनंद का उद्भेद होता है-शांति का फव्वारा उछलता है; सम्यग्ज्ञान के साथ ही उसे अतीन्द्रिय आनंद की अनुभूति होती है। वह जीव स्वसंवेदन-प्रत्यक्षरूप स्वानुभव प्रमाण से तो अपने आत्मा का सम्यक् स्वरूप जानता है, तथा ऐसे प्रत्यक्ष सापेक्ष परोक्ष प्रमाण के द्वारा समस्त तत्त्वों को जानता है। प्रत्यक्ष से रहित अकेला परोक्ष, वह वास्तविक प्रमाण नहीं है।

प्रश्न : शास्त्र के अभ्यास में तो विकल्प है?

उत्तर : मुमुक्षु को विकल्प की मुख्यता नहीं है, किंतु शास्त्र क्या कहते हैं—उसकी मुख्यता है। विकल्प होता है परंतु उस समय ज्ञान का झोक तो विकल्पों से पार ऐसे शुद्ध चैतन्यस्वभाव की ओर झुक रहा है। 'आत्मा ज्ञानानंदस्वरूप है, ज्ञानस्वरूप है, उसका निर्णय करके तुम्हारी पर्याय को उसी में अभेद परिणमाओ'—ऐसी शास्त्रों की आज्ञा है, अतः ऐसे शास्त्र का सम्यक् अभ्यास करनेवाले मुमुक्षु को अपने अन्तरंग में उसके वाच्यरूप अपना ज्ञानानंदस्वरूप आत्मा स्वसंवेदन में आने लगता है, और मोह का नाश होता जाता है।

—ऐसा करने के लिये अंतर में आत्मा का रंग लगना चाहिये। शास्त्र अभ्यास का हेतु कहीं ऐसा नहीं कि शब्दों के सामने देखकर बैठे रहना; किंतु मुमुक्षु का हेतु तो यह है कि शास्त्र

में जैसा कहा, वैसा अपना ज्ञानानंदस्वरूप आत्मा लक्ष में लेकर उसका स्वसंवेदन करना; और ऐसा चैतन्यसंवेदन होना, यही सच्चा शास्त्राभ्यास है। उसके फल में अवश्यमेव आनंद की प्राप्ति और मोह का नाश होता है।—इस अपेक्षा से श्रुत के अभ्यास में निर्जरा होने का भी कहा है।

शंका : शास्त्र के अभ्यास में तो विकल्प है ?

समाधान : आत्मा के लक्षपूर्वक जहाँ शास्त्र का अभ्यास है, वहाँ विकल्प गौण है और ज्ञान मुख्य है। वह ज्ञान, आत्मा का अनुसरण करता हुआ, विकल्प से भिन्न कार्य करता है;

विकल्प टूटता जाता है तथा ज्ञानरस का घोलन बढ़ता जाता है। समयसार के तीसरे कलश में अमृतचन्द्रसूरि ने कहा है कि इस समयसार की व्याख्या से ही मेरे आत्मा की परमविशुद्धि होवो। समयसार के अंत में गाथा ४१५ में कुन्दकुन्ददेव ने भी कहा है कि—

यह समयप्राभृत पठन करके, अर्थ-तत्त्व से जानके।
जो स्थित हो निजआत्म में वह सौख्य उत्तम परिणमें॥

यहाँ भी कहते हैं कि मोहक्षय करने के लिये भावज्ञान के अवलम्बन से दृढ़ीकृत परिणाम के द्वारा, शब्दब्रह्म (-जिनवाणी) की उपासना का सम्यक् प्रकार से अभ्यास करना।- यह मोह के क्षय का उपाय है।

जिनवाणी का अभ्यास मोहछेदन के लिये ब्रह्मास्त्र है।
आत्महित के लिये सम्यक् परिणाम से जिनवाणी का अभ्यास करो॥

यदि सम्यक् प्रकार से उपासना की जाये तो जिनवाणी 'शब्दब्रह्म' का कार्य करती है; जैसे ब्रह्मास्त्र कभी निष्फल नहीं जाता, वैसे जिनवाणीरूप ब्रह्मास्त्र मोह का छेद करने में कभी निष्फल नहीं जाता—शर्त यह है कि आत्मा का सच्चा अर्थी होकर, सम्यक् परिणाम से उसका अभ्यास करना चाहिये। जिनवाणी तो अरिहंत जैसा शुद्ध आत्मस्वरूप दिखानेवाली है:—

जिनपद निजपद एकता भेदभाव नहीं कोई;
लक्ष कराने उसका कहे शास्त्र सुखदाई।

(श्रीमद् राजचन्द्रजी)

भगवान सर्वज्ञ के आत्मा की पहिचान करके, उनके जैसे ही अपने चेतनमय आत्मा को पहचानने से सम्यग्दर्शनादि होते हैं; ऐसे निजपद की पहचान कराने के वास्ते ही समस्त जिनशास्त्र की रचना है, अत: उसका अभ्यास सुखदायी है, उसमें परम शांतरस टपकता है। जिनवाणी के पद-पद में चैतन्य का शांतरस झरता है—क्योंकि आत्मा में जो शांतरस भरा है, उसको वह दिखलाती है। अधिकार समाप्त करते हुये अंतिम ९२वीं गाथा में आचार्य महाराज कहेंगे कि अहो! जिनेन्द्रदेव के यह शब्दब्रह्म जयवंत वर्तो-कि जिनके प्रसाद से शुद्धात्मतत्त्व की उपलब्धि हुई, और अनादि का मोह मिट गया।

❀ ❀ ❀ ❀

❀ जिनवाणी में प्रत्येक वस्तु द्रव्य-गुण-पर्यायस्वरूप कही है ❀

अब, जिस जिनवाणी के सम्यक् अभ्यास से मोह का क्षय होने का कहा, उस जिनवाणी में जीवादि वस्तु का स्वरूप कैसा बताया है?—कि जिसके जानने से सम्यग्ज्ञान होकर मोह का नाश हो जाता है।—वह वस्तुस्वरूप कहते हैं—

जिनवाणी में जीव-अजीव पदार्थों को वस्तु अथवा अर्थ कहा है। उस वस्तु में द्रव्य तथा गुण तथा पर्याय ऐसे तीन संज्ञाभेद होता है, परंतु वस्तु से तीन भेद नहीं अर्थात् वे अलग-अलग तीन वस्तु नहीं है। गुण-पर्यायों का जो सत्त्व है, वह द्रव्य ही है; समस्त गुण-पर्यायों का एकस्वरूप, वही द्रव्य है। द्रव्य का सत्त्व एक, और गुण-पर्याय का सत्त्व दूसरा, ऐसा भिन्न सत्त्व नहीं है; एक ही सत्त्व स्वयं द्रव्य-गुण-पर्यायस्वरूप है—ऐसे द्रव्य-गुण-पर्यायरूप वस्तुस्वरूप जाननेवाले को अवश्य मोहक्षय होता है।

- ❀ जीव के जो चेतनमय द्रव्य-गुण-पर्याय हैं, वे जीव में ही हैं, अन्य समस्त पदार्थों के द्रव्य-गुण-पर्याय से वे सर्वथा भिन्न हैं।
- ❀ अजीव के जो द्रव्य-गुण-पर्याय हैं, वे अजीव ही हैं, जीव के द्रव्य-गुण-पर्यायों से वे सर्वथा भिन्न हैं।

— स्व-पर का ऐसा विभाग जानने से जीव-अजीव में कहीं भी एकत्वबुद्धि का मोह नहीं रहता, एवं जीव-अजीव एक दूसरे का द्रव्य-गुण-पर्याय में कुछ भी करे, ऐसी कर्ता-कर्म की मिथ्याबुद्धिरूप मोह भी नहीं रहता। अपना सत्पना, पर से पृथक् अपने ही द्रव्य-गुण-पर्याय में परिपूर्ण देख लिया, तब स्वाश्रय से सम्यक्त्वादिरूप शुद्ध परिणमन होता है, और मोह नहीं रहता।

भिन्न-भिन्न अनंत जीव हैं; उनमें से हर एक जीव के अपने-अपने द्रव्य-गुण-पर्याय अपने में ही समाते हैं, किसी का द्रव्य-गुण-पर्याय अन्य में नहीं जाते। अहो, वस्तु की ऐसी स्वाधीनता वीतरागी जिनवाणी के बिना और कौन दिखाये? ऐसे स्वाधीन स्वरूप के जानने से सम्यग्ज्ञान तथा वीतरागता होती है—यही जिनवाणी के सच्चे अभ्यास का फल है।

द्रव्य अपने गुण-पर्यायों से अलग नहीं रहता परंतु उनको तन्मयरूप से प्राप्त करता है, स्वयं ही उसरूप होकर रहता है। उसी प्रकार गुण-पर्यायें भी अपने द्रव्य से अलग नहीं रहते

परंतु तन्मय होकर उसको प्राप्त करते हैं, स्वयं ही उसरूप होकर रहते हैं।—इस प्रकार द्रव्य-गुण-पर्यायोंस्वरूप जो वस्तु है, वह अर्थ है। समस्त द्रव्य-गुण-पर्यायों में गुण-पर्यायों स्वकीय द्रव्य से अभिन्न है अर्थात् द्रव्य स्वयं ही गुण-पर्याय स्वरूप सत् है। वस्तु के द्रव्य-गुण-पर्याय में कहीं भी अन्य द्रव्य-गुण-पर्याय का प्रवेश नहीं है, अतः अन्य के ऊपर राग-द्वेष करने का कोई प्रयोजन नहीं रहता। इसप्रकार स्व-पर वस्तु की पहचान में से भेदज्ञान तथा वीतरागता ही निकलती है।

अहा! जिनेश्वरदेव के ऐसे वीतरागी उपदेश की प्राप्ति महाभाग्य से होती है। वस्तु का स्वरूप दर्शानेवाला भगवान का यह उपदेश मोह-राग-द्वेष को हनने के लिये तीक्ष्ण असिधार के समान है।

जो पामी जिनउपदेश हनते राग-द्वेष-विमोह को।
वे जीव पाते जरूर जल्दी सर्वदुःख-विमोक्ष को॥८८॥

जीव प्रथम तो जिन-उपदेश को प्राप्त करे, अर्थात् भगवान के मार्ग में स्व-परवस्तु के द्रव्य-गुण-पर्याय की भिन्नता जैसी कही है, वैसी जाने, तब अंतर के प्रयत्न द्वारा मोह का नाश कर सके। परंतु जिसकी मान्यता ही जिनोपदेश से प्रतिकूल हो, जो एक वस्तु के द्रव्य-गुण-पर्याय को अन्य वस्तु में मिला देता हो, अथवा एक ही वस्तु के स्वद्रव्य-गुण-पर्याय में भिन्नता मानता हो, उसको तो जिनोपदेश की प्राप्ति ही नहीं हुई है, वह तो पर के साथ एकत्वबुद्धि से मोह तथा राग-द्वेष करता है, अतः वह मोह का नाश नहीं कर सकता; उसे तो मोह के साथ मित्रता है।

यहाँ तो जिनोपदेश को पाकर ज्ञान की दृढ़ता के द्वारा जो अवश्य मोह को हनते हैं, ऐसे मुमुक्षु की बात है। वह जीव जानता है कि मेरी सम्यक्त्वादि पर्याय की एकता मेरे आत्मा के साथ है; मेरे गुण-पर्यायों में तन्मय होकर मैं ही रहा हूँ। मेरी पर्याय में चैतन्य का जो स्वसंवेदन हो रहा है, उसका संबंध (एकत्व) मेरे ही साथ है, ऐसे स्वकीय चैतन्यलक्षण के द्वारा धर्मी जीव अपने आत्मा का अन्य समस्त पदार्थों से भिन्न अनुभव करता है-ऐसे अनुभव में स्व-पर का अत्यंत भेदज्ञान होने से मोह जरा भी नहीं रहता।

गुण-पर्याय कहाँ रहते हैं?—स्वद्रव्य में ही रहते हैं।

द्रव्य कहाँ रहता है ?—स्वकीय गुण-पर्यायों में ही रहता है।

इसप्रकार द्रव्य-गुण-पर्यायस्वरूप वस्तु का अस्तित्व अपने में ही परिसमाप्त हो जाता है, अन्य के साथ उसका कुछ भी संबंध नहीं है, सर्वथा भिन्नता है। अहा! द्रव्य-गुण-पर्याय का ऐसा स्वरूप सर्वज्ञ-जिनमार्ग में ही है। ऐसे स्वरूप के जानने से ही सम्यग्ज्ञान तथा निर्मोहता होती है; और ऐसा जीव अचिरकाल में मोक्ष पाता है, मोक्ष पाने में अब उसको दीर्घकाल नहीं लगता।

अरे! यह संसार तो उत्पातमय है, चारों गति में सदा दु:ख का क्लेश ही भरा है; जैसे अग्नि पर रखा हुआ जल फदफद होता है, वैसे अज्ञानी जीव मोह की आग में जलता हुआ चारगति के भयंकर दु:खों में खदखदाता है। ऐसे दु:खों में अति दीर्घकाल बीत चुका। हो गयी सो हो गयी—परंतु अब, ऐसे घोर दु:खों से शीघ्र ही छुड़ानेवाला जिनोपदेश महा भाग्य से मुझे प्राप्त हुआ है, इस जिनोपदेश में चेतनलक्षणरूप मेरे स्वतत्त्व का द्रव्य-गुण-पर्याय पर से अत्यंत भिन्न दिखाया; तो अब ऐसे कल्याणकारी जिनापदेश को पाकर मुझे शीघ्र ही उत्कृष्ट प्रयत्न के द्वारा मोह का नाश कर देना है—ऐसा दृढ़ निश्चय करके मुमुक्षुजीव अंतर्मुख उद्यम के द्वारा, स्वकीय चैतन्यस्वरूप द्रव्य-गुण-पर्यायों का अपने में ही अंतर्भाव करता हुआ, तथा परकीय चेतन-अचेतन समस्त पदार्थों को अपने से भिन्न रखता हुआ, तीनों काल चैतन्यलक्षणस्वरूप से अपने को अनुभव में लाता है; उसी समय उसके मोह का नाश हो जाता है, और अल्प काल में ही वह जीव इस घोर दु:खमय संसार से छूटकर अपूर्व आनंदमय मोक्ष को प्राप्त करता है। देखो, यह जिनवाणी के सच्चे अभ्यास का उत्तम फल! मोह का नाश तथा मोक्ष की प्राप्ति-जिनवाणी के सम्यक् अभ्यास द्वारा किये गये भेदज्ञान का फल है।

धर्मी जीव को कहीं भी अरिहंत का विरह नहीं है।
अज्ञानी को सदा ही अरिहंत का विरह है॥

शंका : अभी तो यहाँ जिनवरदेव विद्यमान नहीं हैं, तब फिर जिनोपदेश की प्राप्ति कैसे हो ?

समाधान : समयसारादि परमागमों में वीतराग संतों की जो वाणी है, वह जिनोपदेश ही है; अनुभवी-ज्ञानी के द्वारा उस उपदेश की प्राप्ति करने से, सर्वज्ञस्वभावी आत्मा का, एवं जिन्हें

सर्वज्ञता प्रगट हो गयी है, ऐसे अरिहंतदेव के स्वरूप का भी निर्णय हो जाता है। अरिहंतदेव के शुद्ध द्रव्य-गुण-पर्याय का यथार्थस्वरूप जिसने जान लिया उसके ज्ञान में अरिहंत का कभी विरह नहीं है। तथा कोई जीव बाहर में अरिहंतदेव के समीप बैठकर भी यदि अंतर में उनके आत्मिकस्वरूप को नहीं पहचानता तो उसे अरिहंतदेव मिले ही नहीं, समवसरण में भी उसे तो अरिहंत का विरह ही है।

जगत में अरिहंत अवस्था को प्राप्त सर्वज्ञ-आत्मा का सदैव अस्तित्व है ही; उनका अस्तित्व जिसने पहचान लिया, वह भले भरतक्षेत्र में हो तो भी, उसको सर्वज्ञ का विरह नहीं है; तथा जिसने सर्वज्ञ का अस्तित्व न जाना, उसे तो (भले ही वह महाविदेह में हो तो भी) सर्वज्ञ का विरह ही है। एक वस्तु घर में विद्यमान हो, किंतु जिसे उसका ज्ञान नहीं है, उसके लिये तो उसका विरह ही है; और घर में विद्यमान वस्तु का जिसे ज्ञान है, वह कहीं पर भी बैठा हो तो भी उसके लिये उस वस्तु का सद्भाव ही है, विरह नहीं है।

अरे जीव! जैनधर्म तथा वीतरागी अरिहंतदेव का उपदेश महावीर भगवान को परंपरा में आज भी तेरे को प्राप्त हो रहा है तो इस प्रसंग में ज्ञान में सम्यक् उद्यम के द्वारा यदि दर्शनमोह का नाश करके सम्यग्दर्शन की प्राप्ति तू नहीं करेगा तो फिर कब करेगा? अभी ही संसार दुःख से छूटने का उत्तम अवसर है। मोह का छेद करने के लिये तीक्ष्ण असिधार जैसा वीतरागमार्ग का उपदेश झेलकर, स्व-पर की अत्यंत भिन्नता का निश्चय करके तू स्वसन्मुख हो जा। चैतन्य का स्वरूप जानते ही उपयोग उसमें सम्मुख होकर एकाग्र हो गया—इसी का नाम मोह के छेदने के लिये तीक्ष्ण तलवार का प्रहार है। समयसार में उस प्रज्ञा को 'तीक्ष्ण छैनी' कहा है, यहाँ 'तीक्ष्ण असिधारा' कहा है।

वाह रे वाह! आचार्य भगवंतों की वाणी आत्मार्थी जीव के शौर्य को जगानेवाली है; जिनवाणी तो पुरुषार्थप्रेरक है; वह कायर के हृदय में नहीं समाती। वीतराग की वाणी का ग्रहण करना, वह तो शूरवीरों का काम है। ['हरिनो मारग छे शूरनो, नहीं कायरनुं काम']

आत्मा के स्वरूप का निश्चय करने के प्रयत्न काल में ज्ञान के साथ में विकल्प राग होते हुए भी, मुमुक्षु जीव की बुद्धि स्वभाव की ओर ढलती है, राग की ओर उसकी बुद्धि नहीं

झुकती किंतु उससे भिन्न चैतन्यस्वरूप मैं हूँ—इस प्रकार अंतर के स्वभाव की ओर उसकी बुद्धि ढलती है।

मेरे गुण-पर्याय का संबंध मेरे द्रव्य से है, तथा पर के गुण-पर्याय का संबंध परद्रव्य से है; जो चैतन्यभावरूप मेरा द्रव्य-गुण-पर्याय है, वह मैं हूँ और अन्य सब मेरे से पर हैं; इसप्रकार स्व-पर की यथार्थ भिन्नता जाननेवाले जीव के मोह का क्षय हो जाता है। जिनवाणी का भी यही उपदेश है। अतएव जिसने स्व-पर का भेदज्ञान करके मोह का नाश किया, उसने ही जिनवाणी का सच्चा अभ्यास किया है।

जैसे कोई पुरुष तीक्ष्ण तलवार हाथ में लेकर के खड़ा रहे, किंतु यदि वह उसका उपयोग न करे तो शत्रु को मार नहीं सकता; वैसे जिनवाणीरूप तीक्ष्ण तलवार महा भाग्य से हाथ में आयी है, उसे पढ़े सुने, किंतु यदि उसका उपयोग न करे अर्थात् उसमें कही हुई चेतनरूप वस्तु में उपयोग को एकाग्र न करे तो वह जीव मोह का नाश कैसे करेगा? सच्चा मुमुक्षु तो शूरवीर होकर, ज्ञान के प्रयत्न द्वारा, जिनवाणी अनुसार स्व-पर को भिन्न जानकर, अंतर्मुख उपयोग के दृढ़ प्रहार से मोह को परास्त कर देता है।—यही मोह के नाश की रीत है।

तातें यदि जीव चाहता निर्मोहता निज आत्म को।
जिनमार्ग तें द्रव्योमहीं जानों स्व-पर के गुण को॥९०॥

जिनमार्ग के अनुसार वस्तु के द्रव्य-गुण-पर्याय को पहचानकर, अपने चेतनलक्षण के द्वारा अपने को पर से भिन्न जानने से मोह अवश्य नष्ट हो जाता है और अपूर्व आनंदसहित सम्यग्ज्ञान प्रगट होता है।

अरे! ऐसा ज्ञान करानेवाली जिनवाणी के प्रति मुमुक्षु धर्मी जीव को परम बहुमान आता है; जिसप्रकार देव-गुरु पूज्य हैं, उसीप्रकार जिनवाणी भी पूज्य है। अहो, ऐसे स्वाद्वाद-मुद्रित जैनेन्द्र शब्दब्रह्म जयवंत वर्तो... और उसके द्वारा संप्राप्त आत्मतत्त्व की उपलब्धि जयवंत रहो।●

❀ जिनोपदेश पाकर वीर-मुमुक्षु भावज्ञान के दृढ़ प्रहार द्वारा मोह का नाश करता है ❀

अरे, बहुत दु:खों से भरपूर इस संसार में, सुख का मार्ग दिखानेवाली जिनवाणी महाभाग्य से मुझे मिली; वीतरागी-जिनोपदेशरूपी यह तीक्ष्ण तलवार पाकर, अब मुझे भावज्ञान के तीव्र अभ्यास के द्वारा मोह को शीघ्र ही मार देना योग्य है। इसप्रकार दृढ़ निश्चय के द्वारा शूरवीर होकर मुमुक्षु अंतर्मुख उपयोग के द्वारा आत्मअनुभूति करके मोह को नष्ट कर देता है, और आनंदमय मोक्षमार्ग प्राप्त करता है। आईये, आप भी शूरवीर बन जाइये,—जिनवाणीरूप वीतरागी तलवार आपके हाथ में ही है।

आत्मअनुभूति का मार्ग

चैतन्यलक्षण से लक्षित मैं, एक-शुद्ध-ममत्वरहित और ज्ञानदर्शन स्वभाव से परिपूर्ण हूँ—ऐसा निश्चय करनेवाला जीव, विकल्प के भँवर को दूर करके, अपने चैतन्यसमुद्र भगवान आत्मा को अपने में ही मग्न करता हुआ आस्रवोंरूपी जहाज की पकड़ को छोड़ देता है, अर्थात् अपने को आस्रव से भिन्न चैतन्यस्वरूप अनुभव करता हुआ वह अपने में ही मग्न होता है; उसको स्वरूप का संचेतन हुआ है, और वह धर्मी है। धर्मात्मा की ऐसी दशा समझाकर आचार्यदेव ने अनुभूति का मार्ग खोल दिया है। ऐसी अनुभूति ही महावीर भगवान का मार्ग है।

समयसार की ३८वीं गाथा में धर्मात्मा के स्वरूपसंचेतन का वर्णन किया है; यहाँ ७३वीं गाथा में भी शुद्ध आत्मा के अनुभव का ही वर्णन है। कैसे आत्मा के अनुभव से जीव रागादि आस्रवों का निरोध करता है? यह दिखलाते हैं। चैतन्यस्वरूप आत्मा का निश्चय करके उसके अनुभव से क्रोधादि आस्रवों का त्याग हो जाता है। ज्ञान के परिणमन में क्रोधादि आस्रव का परिणमन नहीं है।

धर्मी जीव अपने आत्मा का ऐसा अनुभव करता है कि 'मैं एक हूँ।' अनादि-अनन्त, सदा प्रत्यक्ष अखण्ड चैतन्यज्योति विज्ञानघनस्वभावरूप जो मेरा एकत्व है, उसके स्व-संवेदन में कर्ता-कर्म-क्रियादि भेदों की प्रक्रिया नहीं रहती; आत्मा कर्ता, ज्ञान साधन इत्यादि कारक भेद का कोई विकल्प शुद्ध आत्मा की अनुभूति में नहीं है; इसलिये अनुभूतिस्वरूप आत्मा एक है। एक होने से शुद्ध है। ऐसे शुद्ध आत्मा की अनुभूति के बिना अन्य कोई उपाय से आस्रव का त्याग नहीं हो सकता। आत्मा के एकत्व की अनुभूति का, तथा आस्रवों से भिन्न होने का, समय एक ही है, दोनों में कालभेद नहीं है।

अहा, अपने भीतर के गुण-गुणीभेद का विकल्प भी जिसमें समा नहीं सकता, उसमें अन्य स्थूल राग का या शरीर की क्रियाओं का प्रवेश कैसे हो सकेगा? आत्मा की अनुभूति

(जिसका चतुर्थ गुणस्थान से ही प्रारंभ हो जाता है, वह) जड़ से, राग से एवं समस्त विकल्पों से पार एक शुद्ध चैतन्यमात्र है। 'मैं एक हूँ, शुद्ध हूँ'—ऐसा भी विकल्प अनुभूति के समय नहीं रहता, किंतु विशेषण के बिना दूसरे को कैसे समझाया जाये? पर्याय ने अंतर्मुख होकर आत्मा के एकत्व का अनुभव किया, अर्थात् आत्मा स्वयं अपने स्वानुभवरूप परिणमित हुआ, उसमें न पर्यायभेद का अनुभव है, न कारकभेद का; शुद्ध चैतन्य की अनुभूतिमात्र एक आत्मा ही रहता है। उसको शुद्ध कहो, ध्रुव कहो, अभेद कहो, सब विशेष उसमें समा जाते हैं। अहा! धर्मात्मा की आत्मअनुभूति में आनंद का नाथ झूम रहा है; जिसके अनुभव में आनंद का नाथ विद्यमान नहीं, वह परिणति दु:खित (-विधवा की तरह अनाथ) है। धर्मात्मा कहते हैं (कदाचित् किसी स्त्री का पति विद्यमान न हो तो भी वह धर्मात्मा स्त्री जानती है-) कि अरे, हमको आनंद देनेवाला हमारा चैतन्यनाथ हमारी अनुभूति में जीवंत है-विद्यमान है, फिर हमें दु:ख कैसा? आनंद का नाथ जहाँ साक्षात् विराजमान है, वहाँ अनुभूति भी आनंदरूप ही रहती है। अनुभूति में जो आनंद हुआ, ऐसे अनंत आनंद का पूरा पिण्ड हमारा आत्मा है। ऐसे शांत-आनंदमय आत्मा को अनुभव में लेते ही क्रोधादि समस्त अन्य भाव भिन्न रह जाते हैं, अनुभूति में प्रवेश नहीं करते, अनुभूति से बाहर ही रहते हैं। परिणति तो अंतर में प्रवेशकर चैतन्य-पाताल में उतर गयी; बाहर के कोई विकल्प उसका साधन नहीं है, वे तो बाहर ही रह जाते हैं।

परिणति ने अंतर्मुख होकर चैतन्यस्वभाव का अनुभव किया, तब आत्मा अंतरात्मा हुआ, आस्रव को छोड़कर स्वयं संवररूप हुआ, आनंदरूप हुआ। अहा, मेरी चैतन्य अनुभूति तो महाआनंदरूप है, और क्रोधादि आस्रवों का वेदन तो अकेला दु:खरूप था। कहाँ तो यह चैतन्य अनुभूति का आनंद! और कहाँ इन आस्रवों की आकुलता का दु:ख? इन दोनों के बीच कुछ भी नाता-रिश्ता नहीं है, दोनों की जाति ही भिन्न है, दोनों को आपस में कर्ता-कर्मभाव नहीं है। भेदज्ञान के द्वारा ऐसी भिन्नता का निश्चय करके, तुरंत ही आस्रवों को छोड़कर जीव अपने निर्विकल्प विज्ञानघनस्वभाव में स्थिर होता है। यही संवरधर्म है, यही मोक्षमाग है, यही आस्रवों को छोड़ने की विधि है।

देखो! यह सर्वज्ञ परमात्मा के पास से आई हुई बात है। (गुजराती भाषा में इसको 'केवलिनां कहेण आव्या छे'—ऐसा कहते हैं) इसका तुम स्वीकार कर लो! अपने आत्मा की

सच्ची लगन से अपनी स्वपरिणति को प्राप्त करने के लिये, केवली परमात्मा के इस 'दहेज' को तुम आनन्द से स्वीकार कर लो। ऐसा करने से तुमको अनंत गुणलक्ष्मी के दहेज के साथ मोक्षपरिणति प्राप्त होगी, तुमको महान अतीन्द्रियसुख प्राप्त होगा।

चैतन्य का अनुभव करनेवाला धर्मी जीव किसी भी क्रोधादि परभाव का स्वामी नहीं होता, वह उससे जुदा ही जुदा अपनी चेतनारूप ही परिणमन करता है; अत: धर्मात्मा को परभाव के स्वामित्व से रहित निर्ममत्वभाव रहता है; पर की ममता से रहित तथा अपने ज्ञान-दर्शनस्वभाव से परिपूर्ण—ऐसे आत्मा को देखता हुआ उसी में उपयोग लगाता है। स्व-सन्मुख उस उपयोग की अनुभूति में परभाव से भिन्नता हो गई, वही निर्ममत्व है। कदाचित् अल्प क्रोधादि का परिणमन होता हो, परंतु धर्मी की चेतना तो उससे भिन्न हो रही है, उसमें तन्मय नहीं होती; चेतना कर्ता और क्रोध उसका कार्य—ऐसा स्वामीत्व धर्मात्मा को अंशमात्र भी नहीं होता। कोई भी राग-विकल्प का मैं कर्ता हूँ—इसप्रकार जो अपनी चेतना में विकल्प का कर्तृत्व या स्वामित्व मानता है, उस जीव को अनंत परभावों का ममत्व है, और अपने पूर्ण ज्ञान-दर्शनस्वभाव का स्वीकार नहीं है। बाह्य में वह भले त्यागी भी हो, परंतु उसकी अज्ञान-चेतना में अनंत परभावों की पकड़रूप परिग्रह पड़ा है, वह अपने को परभाव के स्वामीरूप ही अनुभव करता है। धर्मी जीव तो अपने को चेतनास्वरूप ही अनुभव करता है, उसकी चैतन्यअनुभूति में राग के कण का भी प्रवेश नहीं है, अत: धर्मी को कोई भी परभाव का स्वामीत्व नहीं है, वह अत्यंत निर्मम है।

अरे, ऐसे आत्मा का निश्चय भी जो नहीं करता, उसको आत्मा का अनुभव कैसे होगा? आस्रवों से भिन्न अपने आत्मस्वरूप के अस्तित्व को जो नहीं देखता। वह आस्रव का कर्तृत्व क्यों छोड़ेगा? और जिसे रागादि आस्रव का कर्तृत्व है, उसे उसका स्वामित्व भी है, अत: वह निर्ममत्व नहीं होता। धर्मात्मा जानते हैं कि मेरी चेतना का स्वभाव तीनों काल ऐसा है कि जिसमें राग का कण भी नहीं है; राग के किसी भी अंश का स्वामित्व मेरी चेतना में नहीं है; ऐसी जो चैतन्यअनुभूति है, वही धर्मात्मा की अनुभूति है। ऐसी अनुभूति ही धर्मात्मा को पहचानने का सच्चा लक्षण है।

जीव का स्वभाव ज्ञान-शांति-आनंदमय है, दु:ख उसका स्वभाव नहीं है। वह अपने

स्वभाव को भूलकर, राग में तन्मय होकर वर्तता है, यही आस्रव है। आत्मा ने अज्ञान से आस्रव को पकड़ रखा है (-अपना स्वरूप मान रखा है), इस कारण वह दु:खी है। राग से भिन्न-चैतन्यस्वभाव को जानकर उसरूप परिणमन करने से वह जीव आस्रवों को छोड़ देता है (अर्थात् रागरूप नहीं परिणमता) और अपने निर्विकल्पस्वभाव की परम शांति का वेदन करता है; चैतन्यसमुद्र स्वयं अपने में स्थिर होकर परम शांतरस का वेदन करता है।

जो जीव ऐसी दशारूप हुआ, वही धर्मी है। उसकी धर्मदशा तथा उसका द्रव्य दोनों एक सत् है; इसलिये 'इस पर्याय का कर्ता होकर मैं इसे करूँ'—ऐसे भेद का विकल्प भी उसमें नहीं है। अंतर का अनुभव विकल्प-क्रियाओं से पार है। ज्ञानस्वभाव मैं हूँ—ऐसा निश्चय करनेवाली पर्याय भी विकल्प से भिन्न होकर शुद्धज्ञान के साथ एकत्वरूप होकर परिणमी है। अत: शुद्ध हुई है; पर्याय स्वयं शुद्ध होकर शुद्धस्वभाव का स्वीकार करती है। शुद्धस्वभाव का स्वीकार करे और पर्याय में अकेली अशुद्धता ही रहे—ऐसा नहीं हो सकता। जिसकी पर्याय में शुद्धता नहीं, उसने शुद्धस्वभाव का स्वीकार ही नहीं किया। शुद्धता के बिना शुद्धस्वभाव का स्वीकार किसने किया? राग के विकल्प में तो ऐसी कोई ताकत नहीं जो शुद्धस्वभाव का स्वीकार कर सके।

आत्मा ज्ञानस्वभाव है, वह स्वयं इष्ट है; आनंदरूप है; तथा राग-द्वेष-मोह तो ज्ञान से विरुद्ध होने से अनिष्ट है, अरि है; उस अरि को ज्ञान के द्वारा हनने से आत्मा अरिहंत होता है; राग जो कि अरि है, अज्ञानी उसे धर्म का साधन मानता है, तो वह अरि को कैसे हनेगा? राग—चाहे अशुभ हो, चाहे शुभ हो, उसे जो धर्म का साधन मानता है, वह रागरूप अरि के हनने का स्वीकार नहीं करता अर्थात् वह अरिहंत को नहीं मानता। जो अरिहंत को मानता है, वह राग का (अरि का) आदर नहीं करता। धर्मी को रागादि के साथ स्व-स्वामीपना नहीं होता, कर्ता-कर्म संबंध भी नहीं होता; जहाँ स्व-स्वामी ही, वहीं पर कर्ता-कर्मभाव होता है; ज्ञानी के तो स्व-स्वामीत्व एवं कर्ता-कर्मभाव ज्ञानस्वभाव में ही समाता है।

हे भाई! अरिहंतदेव के मार्ग में आकर अब तू यह निश्चय तो कर ले कि कौन तेरा 'स्व' है; और कौन तेरा 'अरि' है? रागादिभाव तेरा स्व नहीं परंतु अरि है; राग से पार ज्ञानानंदस्वभाव ही तेरा स्व है। इसप्रकार रागादि विभावों से भिन्न चेतनस्वभावरूप ही अपने को अनुभव में

लेता हुआ धर्मी जीव, रागादि विकल्प का स्वामी होकर कदापि नहीं परिणमता, रागादि से भिन्न ही रहता हुआ सदा आनंदघनरूप ही परिणमन करता है, उसने ही आस्रवों को छोड़ दिया, तथा स्वयं संवरदशारूप होकर अपने में शांत हुआ है।—अहा, आत्मा की ऐसी समझ का फल बहुत महान है। आत्मा का स्वभाव महान है, तो उसके अनुभव का फल भी तो महान ही होता है। सादि-अनंत काल का अनंत वीतरागी सुख आत्मा के अनुभव के फल में प्राप्त होता है।

जीव को सच्ची निर्ममता तब ही होती है—जब वह ज्ञान और राग की भिन्नता का अनुभव करे। यदि राग के लवलेश को भी ज्ञान का कार्य समझे तो उसे समस्त राग का तथा उसके फल का ममत्व विद्यमान है। धर्मीजीव ने अपनी चेतना को स्वसंवेदन द्वारा राग से अत्यंत भिन्न कर दी है,—मेरी चेतना में राग की छाया भी नहीं है। राग के कोई अंश का ज्ञान में स्वीकार नहीं करता, इसलिये उसे सर्वत्र निर्ममत्व है। समस्त परभावों से ममत्व छोड़कर, अपने सहज ज्ञानस्वरूप में रहना-यही निर्विकल्पज्ञान की अपूर्व अनुभूति है, यही धर्म है।

स्वानुभव में धर्मी जीव, चैतन्यस्वभाव से परिपूर्ण तथा रागादि परभावों से रहित आत्मा का अनुभव करते हैं। ऐसा अनुभव करने से ही इस भवचक्र का भ्रमण मिट सकता है। अरे जीव! तू ज्ञानस्वभाव से पूर्ण, आनंद से भरा, तुझे यह दु:ख और भव-भ्रमण शोभा नहीं देता। स्वसंवेदन से आनंदरूप होना, उसी में तेरी शोभा है। चैतन्यप्रकाश में तेरा वास है, राग के अंधेरे में तेरा वास नहीं है; तू स्वयं चैतन्यवस्तु हो, तेरा आसन चैतन्य में ही होता है, राग में नहीं। चैतन्य की अनुभूति ही धर्मी का लक्षण है; राग धर्मी का लक्षण नहीं होता।—ऐसे सत्य चिह्न से धर्मात्मा को जो पहिचाने, उसे अपने में भी भेदज्ञान होकर राग से भिन्न ज्ञानचेतना प्रगट होती है। धर्मी के ऐसे चिह्न का अचिंत्य वर्णन समयसार में (गाथा ७५ आदि में) जगह-जगह पर किया है। अकेले शुभराग के विकल्प द्वारा धर्मी की पहचान नहीं होती। अपने में भेदज्ञान के द्वारा ही भेदज्ञानी जीव की सच्ची पहिचान हो सकती है। (जय महावीर)

卐 आनंद का महोत्सव 卐

[महावीर-निर्वाणोत्सव संबंधी नाटक]

लेखक : ब्रह्मचारी हरिलाल जैन

अभी दीपमालिका आयेगी और महावीर भगवान का २५०० वर्षीय निर्वाण-महोत्सव प्रारंभ होगा; यह उत्सव पूरे वर्ष तक मनाया जायेगा। भारतवर्ष के हम छोटे-बड़े सब आनंदपूर्वक उसमें सम्मिलित होंगे। भगवान के कल्याणक के विशेष प्रसंगों पर इन्द्र भी नाटक द्वारा अपना महान आनंद व्यक्त करते हैं। हमारे जैन बालक भी नाटक द्वारा आनंद व्यक्त करें और इसप्रकार महावीर भगवान की भक्ति करें—इसलिये यहाँ एक छोटा-सा नाटक प्रस्तुत किया जाता है। जैन समाज के किसी भी संप्रदाय के बालक या बालिकायें यह नाटक उत्साह के साथ प्रदर्शित कर सकते हैं। यह नाटक दीपावली के पहले धनतेरस या चतुर्दशी के दिन करना चाहिए।

[नाटक का प्रारंभ भगवान महावीर की तीन बार जय बोलकर करें]

[सूत्रधार :] आज महान आनंद का दिन है; अपने शासनदेव महावीर भगवान आज मोक्ष पधारे हैं। जगत में सर्वश्रेष्ठ ऐसा महान जैनधर्म, और महावीर भगवान जैसे वीतरागी देव, अपने को महान भाग्य से प्राप्त हुए हैं। भगवान ने हमें सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप मोक्षमार्ग बतलाया है, इसलिये उनकी हम जितनी भक्ति करें और जितना गुणगान करें, वह कम है। आज के इस मंगल प्रसंग पर एक छोटे से नाटक द्वारा हम अपना आनंद और भक्ति व्यक्त करते हैं।

[पाँच बालक यह अथवा अन्य कोई अपनी मनपसंद मंगल स्तुति बोलें]

करूँ नमन मैं अरिहन्त देव को;
करूँ नमन मैं सिद्ध भगवंत को;
करूँ नमन मैं आचार्यदेव को;
करूँ नमन मैं उपाध्यायदेव को;
करूँ नमन मैं सर्व साधु को;
पंच परमेष्ठी ! मेरे तुम इष्ट हो !

[मंगल घंटनाद, वाजिंत्र और प्रकाश]

(सखी-१) अरे बहिन! यह मंगल घंट क्यों बज रहा है? ये मंगल वाजिंत्र क्यों बज रहे हैं? यह दिव्य प्रकाश क्यों जगमगा रहा है?

(सखी-२) वाह बहिन! आज तो हमारे महावीर भगवान के मोक्षगमन का महान दिन है। २५०० वर्ष पहले भगवान पावापुरी से मोक्ष पधारे, तब संपूर्ण जगत में आनंद छा गया था; आज भी मोक्ष के आनंद का उत्सव समस्त जगत मना रहा है। हम भी आनंदपूर्वक मोक्षदशा का स्मरण करके उसकी भावना भाते हैं।

(सखी-३) वाह बहिन वाह! भगवान के मोक्ष का स्मरण करने पर किसको आनंद न होगा? भगवान तो ज्ञान के ही देनेवाले हैं।!

आनंद आनंद आज है, निर्वाण-उत्सव आज है,
आओ भक्तों आओ सर्वे खुशीयाँ अपरंपरा हैं।
आनंद-मंगल आज है वीरप्रभु जयकार है,
आओ भक्तो आओ सभी वीरप्रभु गुनगान है॥

(सखी-४) बहिन, महावीर भगवान के मोक्ष की इतनी बड़ी महिमा क्यों है?

(सखी-५) मोक्षदशा सर्वोत्तम है और पूर्ण आनंदमय है, ऐसी दशा भगवान ने प्राप्त की है, इसलिये हम उनकी जितनी भी महिमा करें, वह कम है। सुनो, श्री कुन्दकुन्द मुनिराज उनकी महिमा करते हुए कहते हैं कि—

अत्यंत आत्मोत्पन्न विषयातीत अनुप अनंत है।
विच्छेदहीन है सुख अहो! शुद्धोपयोग-प्रसिद्ध के॥

अशरीर है अविनाश है निर्मल अतीन्द्रिय शुद्ध है।
है सिद्धलोके सिद्ध वैसे जान सब संसारी को॥

वाह, भगवान ऐसे महान मोक्षपद को प्राप्त हुए; तो उनका जीवन भी कैसा अद्भुत होगा?

(सखी-६) अरे, उसकी क्या बात? क्या तुझे अपने भगवान की अद्भुत महिमा की खबर नहीं?-तो सुनो! हमारे भगवान कहीं राग-द्वेष करने के लिये, या जगत का भला-बुरा करने के लिये अवतरित नहीं हुए थे परंतु उनका अवतार तो वीतराग होकर भव से पार होने के लिये था।

(सखी-७) और दूसरी बात यह है कि भगवान तो स्वयं वीतराग होकर भव को तर गये और मोक्षमार्ग का उपदेश देकर हम सबको भी भव से तिरने का उपाय बतलाया। इसलिये भगवान महान हैं।

(सखी-८) हाँ देखो, 'नमुत्थुणं' स्तोत्र में भी भगवान की स्तुति करते हुए कहा है कि—'तिन्नाणं... तारयाणं'-अर्थात् हे भगवान! आप स्वयं तो भव-समुद्र से तरनेवाले हो; और आत्मा का स्वरूप बतलाकर हमें भी भव से तारनेवाले हो।

—परन्तु हे बहिन! भव से तरने का उपाय तो सभी धर्मवाले बतलाते ही हैं?

(सखी-१) नहीं बहिन! यह बात मिथ्या है। संसार से तरने का सच्चा उपाय तो जैनधर्म में हमारे भगवान महावीर ने ही बतलाया है; और वही एक भव से तिरने का सच्चा मार्ग है; अन्य कोई मार्ग नहीं है।

(सखी-२) वाह बहिन, तुम तो बड़ी विद्वान दिखती हो! भगवान ने संसार से तरने का उपाय कौन-सा बतलाया है? वह तो मुझे बतला दे।

(सखी-३) सुनो बहिन, यह बात समस्त जैनशास्त्रों ने स्वीकार की है कि सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र ही मोक्षमार्ग है। अपने भगवान महावीर ने भी सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र का उपदेश दिया है। यदि हमें भगावन के मार्ग पर चलना है तो हमें भी सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की आराधना करनी चाहिये।

(सखी-४) वाह बहिन, तुमने तो बहुत ऊँचे दर्जे की बात कही। परंतु हमें समझ में आये ऐसी कोई बात कहो न ?

(सखी-५) बहिन, बहुत ऊँची बात है-यह सच है; परंतु अपना जैनधर्म भी तो श्रेष्ठ है, इसलिये उसकी समस्त बातें भी श्रेष्ठ ही होंगी। सबसे श्रेष्ठ ऐसा मोक्षपद प्राप्त करने के लिये तो श्रेष्ठ मार्ग पर ही चलना होगा।

(सखी-६) ठीक है, अपने भगवान महावीर ने भी ऐसे श्रेष्ठ मार्ग का ही ग्रहण किया था ना!

(सखी-७) हाँ देखो, महावीर भगवान का जीव पूर्व में अज्ञानी और माँसाहारी सिंह था, परंतु बाद में उस जीव ने जैनधर्म को प्राप्त किया, उसने माँसाहार का त्याग किया और मुनिराज के उपदेश से आत्मस्वरूप को पहिचानकर सम्यग्दर्शन प्रगट किया। अंतिम भवों में साधु होकर, वीतरागीचारित्र का पालन करके केवलज्ञान प्रगट किया और अंत में कार्तिक वदी अमावस के दिन पावापुरी से मोक्ष पधारे। मोक्ष के हेतु भगवान ने जो किया, वही हमें करना चाहिये।

(सखी-८) वाह, बहिन! तुमने तो भगवान का सारा जीवन-चारित्र बतला दिया; वह सुनकर आनंद होता है, और महावीर प्रभु के मार्ग पर चलने की भावना जागृत होती है।

(सखी-९) हाँ, बहिन! वास्तव में हम वीर की संतान हैं, और हमें वीर प्रभु के मार्ग पर ही चलना है। हम जैन हैं, जैन अर्थात् जिनवर की संतान।

[सब मिलकर गावें; प्रत्येक पंक्ति दो बार बोली जाये।]

हम हैं जिनवर के संतान... जिनवर पंथे जायेंगे...
गाते गाते प्रभु गुणगान, उज्ज्वल आत्मा पायेंगे...
करके आत्मा की पहिचान, मुक्ति पथ पर विचरेंगे...
हम हैं महावीर के संतान महावीर पथ पर जायेंगे।

(सखी-२) अहा, महावीर भगवान का मार्ग कितना सुंदर है! कितना महान है! महावीर का मार्ग अर्थात् वीतरागभाव! महावीर का मार्ग अर्थात् मुक्ति का मार्ग। वह मार्ग आज हमें मिला है, तो चलो! सब आनंद से उस मार्ग पर चलें।

(सखी-३) भगवान को मोक्ष पधारे आज २५०० वर्ष हो चुके हैं, तथापि आज भी भगवान द्वारा प्ररूपित मोक्षमार्ग कैसा सुंदर शोभायमान हो रहा है!

(सखी-४) वाह बहिन! वास्तव में अपना महान भाग्य है कि—ऐसे कलिकाल के पापयुग में जब चारों ओर पाप ही पाप दिख रहा है, पग-पग पर हिंसा-झूठ-चोरी-सिनेमा में भयंकर बुरे संस्कार और अन्याय के मार्ग से धन कमाने का पागलपन, इन सबके बीच में भी आज हमें ऐसा सुंदर वीतरागधर्म और उसके उत्तम संस्कार मिले हैं,—वह भगवान महावीर का ही उपकार है।

(सखी-५) बस, अब हम सब महावीर भगवान के मार्ग पर चलने को तैयार हुए हैं। बहिनों, आज से हम सिनेमा नहीं देखेंगे, कंदमूल नहीं खायेंगे-बोलो, है मंजूर?

(सब मिलकर एक साथ) हाँ, मंजूर है—मंजूर है—मंजूर है।
हम सब सिनेमा नहीं देखेंगे, कंदमूल नहीं खायेंगे।

[हर्षनाद एवं घंटनाद]

(सखी-६) और प्रतिदिन हम भगवान के दर्शन करेंगे; तथा धर्म का अभ्यास करेंगे, जिससे महावीर भगवान के मार्ग को पहिचानकर हम भी उसी मार्ग पर चलें।

(सखी-७) वाह, बहुत सुंदर! भगवान के मार्ग पर चलने को हम सब तैयार हैं...

(सब एक साथ—) तैयार हैं.... तैयार हैं।

[एक व्यक्ति गाये... दूसरे साथ उसकी पूर्ति करें] (प्रत्येक पंक्ति दो बार बोलें)

वीरप्रभु की हम संतान ..... हैं तैयार..... हैं तैयार.....
वीरमार्ग में चलने को हम ..... हैं तैयार..... हैं तैयार.....
अरिहन्त देव की सेवा करने ..... हैं तैयार..... हैं तैयार.....
जिनशासन की सेवा करने ..... हैं तैयार..... हैं तैयार.....
साधुजनों की सेवा करने ..... हैं तैयार..... हैं तैयार.....
साधर्मी से हिलने-मिलने ..... हैं तैयार..... हैं तैयार.....
सम्यग्दर्शन-ज्ञान करने ..... हैं तैयार..... हैं तैयार.....

उत्तम चारित्र पालन करने ..... हैं तैयार..... हैं तैयार.....
मोक्षमार्ग में दौड़ लगाने ..... हैं तैयार..... हैं तैयार.....
भवसागर को पार उतरने ..... हैं तैयार..... हैं तैयार.....
वीर निर्वाण का उत्सव मनाने ..... हैं तैयार..... हैं तैयार.....
सिद्धप्रभु के साथ रहने ..... हैं तैयार..... हैं तैयार.....

(सखी-८) वाह, अपना उत्साह और भक्ति देखकर हमारे अध्यक्ष महोदय, माताओं एवं सब साधर्मीजन कैसे प्रसन्न हो रहे हैं। हम सबको हमेशा ऐसे उत्साह से और आनंद से धार्मिक प्रवृत्ति में भाग लेना चाहिये।

(सखी-१) जरूर बहिन! आज तो महावीर भगवान के मोक्ष का उत्सव मनाते हुए हम सबको बहुत आनंद हो रहा है; इससे आत्मा को बहुत लाभ हुआ,... मानो कि आत्मा में चैतन्य-दीपक प्रगट हुआ और अपूर्व दीपावली आयी... साथ में आनंद भी लायी।

(सखी-२) अहा, भगवान के निर्वाण का ऐसा आनंद-उत्सव हमें पूरे एक वर्ष तक मनाना है... अभी तो उसका प्रारंभ हो रहा है। आज से हम सबको महावीर का रंग लगा है; वह रंग अब कभी छूटनेवाला नहीं है।

(सखी-३) चलों, हम सब एक छोटे से गीत-नृत्य द्वारा भक्ति करके अपना आनंद व्यक्त करें।

(सब एक साथ) हाँ... चलो... चलो...

[यह, अथवा दूसरा कोई भी गीत गा सकते हो]

[बालकों के चक्कर के मध्य में एक बालक धर्म-ध्वज लहराता हो]

हे.... अे... रंग लाग्या,... रंग लाग्या.....
रंग लाग्या, महावीर! तेरा रंग लाग्या.....
तेरी भक्ति करने का मेरा भाव जाग्या,
तेरी पूजा करने का मेरा भाव जाग्या,
प्रभु सम्यग्दर्शन का भाव जाग्या..... रंग लाग्या..... महावीर०

प्रभु आतमज्ञान का भाव जाग्या,
प्रभु भेदविज्ञान का भाव जाग्या,
मेरे साधु होने का भाव जाग्या,..... रंग लाग्या.... महावीर०
प्रभु मोक्ष जाने का मेरा भाव जाग्या,
प्रभु-भव से तिरने का मेरा भाव जाग्या,
प्रभु महावीर होने का मेरा भाव जाग्या... रंग लाग्या... महावीर०

[महावीर भगवान के जयकारपूर्वक नाटक समाप्त]

[इस नाटक में योग्य परिवर्तन करके भी आप उपयोग कर सकते हो। आप जब इस नाटक का प्रयोग करें, तब उस संबंधी समाचार 'संपादक आत्मधर्म' (सोनगढ़) को लिखकर भेजें।]

---

* **बाहुबली** (श्री जिनवाणी स्वाध्याय-प्रसारक कार्यालय) से श्रीमान् बालचंद खेमचंदजी जैन लिखते हैं कि **अनेकांतदृष्टि से आपके आत्मधर्म-मासिक का उत्तरोत्तर महत्त्व बढ़ता जा रहा है।**

* **जयपुर :** वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षाबोर्ड की शीतकालीन १९७५ की परीक्षाओं में प्रवेश हेतु फार्म भरने की अंतिम तिथि बढ़ाकर ३० नवंबर कर दी गई हैं।

श्री परमागममंदिर प्रतिष्ठा महोत्सव समिति की ओर से सूचना

श्री परमागममंदिर प्रतिष्ठा महोत्सव समिति का हिसाबी कार्य समाप्त होकर बंद कर दिया है। अत: अब जिसके पास बोली की या अन्य जो भी रकम बाकी हो, वे 'श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट' इस नाम से ड्राफ्ट वगैरह भेजें। यह ड्राफ्ट बैंक ऑफ इंडिया-सोनगढ़ का, अथवा भावनगर की किसी भी बैंक का भेजें।

— श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट, सोनगढ़

महावीर-परिवार (छह बातों का संकल्पपत्रक)

महावीर भगवान के ढाई हजारवें निर्वाणमहोत्सव में मेरा संकल्प—

— प्रतिदिन जिनमंदिर जाऊँ (- यदि एक मील के भीतर हो।)
— आत्महित के लक्ष से प्रतिदिन आधा घंटा शास्त्र पढ़ूं।
— जैनधर्म के ही सच्चे देव-गुरु-शास्त्र को मानूं।
— रात्रि के समय भोजन नहीं करूँ (-जल का अपवाद।)
— बिना छना पानी नहीं पीऊँ। — लौकिक सिनेमा नहीं देखूँ।

उपरोक्त छह बातों के पालन का संकल्प कीजिये, और आपका नाम 'महावीर-परिवार' में छापने के लिये (संपादक आत्मधर्म सोनगढ़ सौराष्ट्र) इस पते पर भेज दीजिये।

[महावीर-परिवार में अब तक जो नाम आये हैं, उनकी यादी—]

६६ श्रीमती मंगुबेन अमृतलाल, फतेपुर
६७ शांतिलाल कपूरचंद शाह, कलकत्ता
६८ प्रभावतीबेन नंदलाल मेहता, सोनगढ़
६९ चतुरभाई डी रजात, उखरेली
७० रुमालभाई लालजीभाई बामणीया, लींबडी
७१ नरेन्द्रकुमार लहेरचंद दोशी, सावरकुंडला
७२ विजयकुमार लहेरचंद दोशी, सावरकुंडला
७३ भरतकुमार लहेरचंद दोशी, सावरकुंडला
७४ भावनाबेन लहेरचंद दोशी, सावरकुंडला
७५ शैलेशकुमार लहेरचंद दोशी, सावरकुंडला
७६ पप्पू लहेरचंद दोशी, सावरकुंडला
७७ जागृतिबेन लहेरचंद दोशी, सावरकुंडला
७८ जवेरबेन जैन, बम्बई-१६
७९ सोनलबेन हसमुखलाल वोरा, सुरेन्द्रनगर
८० किरणबेन रमेशचंद शाह, सुरेन्द्रनगर
८१ मंगलभाई हरिभाई जैन, सरार
८२ शांतिलाल छोटालाल शाह, सरार
८३ भाईलालभाई मोतीभाई पटेल, सरार
८४ अमृतलाल पदमशी शाह, वांकानेर
८५ अरविंद जयंतिलाल मावाणी, गोंडल
८६ कीरणबेन गोपालभाई, अहमदाबाद
८७ ज्योत्स्नाबेन चंपकलाल दोशी, जूनागढ़
८८ प्रफुल्लाबेन लालचंद, लींबडी
८९ कल्पनाबेन लालचंद, लींबडी
९० सुवर्णाबेन लालचंद, लींबडी
९१ मंगलाबेन वाडीलाल, लींबडी
९२ खेतशी पोपटलाल, जामनगर
९३ पानकुंवरबेन खेतशीभाई जामनगर
९४ जयंतिलाल चमनलाल देशी, वढवाण सीटी
९५ हर्षदाबेन जितेन्द्रकुमार मोदी, सोनगढ़
९६ कंचनबेन वालजीभाई, लींबडी
९७ देवजी अेच. धारीआ, बम्बई-३४

९८ जेठालाल हंसराज दोशी, सिकंदराबाद
९९ लल्लुभाई देवचंद, सदाजीना मुवाडे
१०० हीरालालजी गंगवाल, इंदौर
१०१ उमाबाई, इंदौर
१०२ सुशीलाबाई बाबूलालजी, इंदौर
१०३ चेतनाबेन प्रेमजीभाई, इंदौर
१०४ भीमजीभाई रामभाई, कानातलाव
१०५ रूपाबेन प्रविणचंद्र कोठारी, राजकोट
१०६ विकास प्रविणचंद्र कोठारी, राजकोट
१०७ सोनलबेन प्रविणचंद्र कोठारी, राजकोट
१०८ वर्षाबेन प्रविणचंद्र कोठारी, राजकोट
१०९ सेठ मोहनलाल हरखचंद, ध्राफा
११० महेता नेमचंद कस्तूरचंद, फतेपुर
१११ महेता कोदरीबेन नेमचंद, फतेपुर
११२ महेता चंपाबेन नेमचंद, फतेपुर
११३ महेता मंगुबेन केशवलाल, फतेपुर
११४ महेता चुनीलाल, झाबुआ
११५ रतनलाल महेता, झाबुआ
११६ अंजलीबेन शांतिलाल शाह, राजकोट
११७ गीताबेन शांतिलाल शाह, राजकोट
११८ शीलाबेन पी. कामदार, हैदराबाद
११९ खेमचंद खातुजी जैन, बावलवाडा
१२० धारसीभाई जटाशंकर महेता, बम्बई-२२
१२१ वेलजीभाई बिट्ठल जैन, उमराला
१२२ मोघीबेन वेलजी जैन, उमराला
१२३ किशोरकुमार शामदेव जैन, उमराला
१२४ निर्मलाबहिन किशोरकुमार जैन, उमराला
१२५ प्रभातभाई वेलजी जैन, उमराला
१२६ लवजीभाई बीजलभाई जैन, उमराला
१२७ चंपाबेन जैन, वडीया
१२८ उषाकुमारी केशवलाल जैन, वडीया
१२९ कंचनबेन के. जैन, वडीया
१३० वाडीलाल आर., वढवाण सिटी
१३१ ललीताबेन वाडीलाल, वढवाण सिटी
१३२ रंजनबेन वाडीलाल, वढवाण सिटी
१३३ दयाकुमारी शांतिलाल, दिल्ली
१३४ हर्षाबेन चंदुलाल, वढवाण
१३५ बीनाबेन छबीलदास, वढवाण
१३६ सोनाबेन हसमुखलाल, वढवाण
१३७ हर्षाबेन हसमुखलाल, वढवाण
१३८ सरोजबेन अमृतलाल, वढवाण
१३९ ज्योत्सनाबेन अमृतलाल, वढवाण
१४० परेशभाई छबीलदास, वढवाण
१४१ नयनाबेन जयंतिलाल, वढवाण
१४२ सौ. कांतिबाई सिंघई, दमोह
१४३ मनोजकुमार अमृतलाल, बम्बई-२२
१४४ सरोजबेन अमृतलाल शाह, वढवाणसिटी
१४५ शकरालाल हेमचंद गांधी, सोनासण
१४६ चंदनबेन शकरालाल गांधी, सोनासण
१४७ सुरेशचंद्र जे. महेता, बम्बई
१४८ सरस्वतीबेन चंदुलाल, कोचीन
१४९ वर्षाबेन बी. कामदार, कोचीन
१५० संजय बी. कामदार, कोचीन
१५१ हर्षाबेन बी. कामदार, कोचीन
१५२ जागृतिबेन बी. कामदार, कोचीन
१५३ बीनाबेन बी. कामदार, कोचीन
१५४ सुकुमार सूर्यकांत शाह, कोचीन
१५५ संजय प्रवीणचंद शाह, कोचीन

१५६ गुणवंतीबेन पानाचंद, अडताला
१५७ लाभुबेन अनंतराय शाह, अहमदाबाद
१५८ प्रभाबेन दामोदरदास शाह, अहमदाबाद
१५९ मंजुलाबेन रमेशचंद शाह, सुरेन्द्रनगर
१६० मयूरीबेन रमेशचंद शाह, सुरेन्द्रनगर
१६१ चेतनकुमार अनंतराय शाह, अहमदाबाद
१६२ हीनाबेन अनंतराय शाह, अहमदाबाद
१६३ नवीनचंद्र दामोदरदास मोदी, अहमदाबाद
१६४ कु. साधनाबेन दुलीचंद जैन, खैरागढ़
१६५ गंगाबेन रतिलाल जैन, सोनगढ़
१६६ नलिनकुमार मीठालाल गाँधी, प्रांतिज
१६७ ज्योत्स्नाबेन बाबूलाल, बम्बई-२
१६८ रतिलाल दामोदर शाह, जोरावरनगर
१६९ विरजीभाई, भाद्रोड
१७० भाणीबेन जैन, भाद्रोड
१७१ जेठीबेन जैन, भाद्रोड
१७२ छबीलदास सुंदरजी वारीआ, राजकोट
१७३ ललिताबेन सी. वारीआ, राजकोट
१७४ प्रदीपकुमार सी. वारीआ, राजकोट
१७५ जयंतिलाल मोरभाई जैन, वढवाण
१७६ ललिताबेन जयंतिलाल, वढवाण
१७७ विजयकुमार पोपटलाल शाह, प्रांतिज
१७८ मोहनलाल जैन, जलगाँव
१७९ ललिताबेन वृजलाल शाह, जलगाँव
१८० नितिनकुमार सोगठी, जलगाँव
१८१ मंजुलाबेन जैन, जलगाँव
१८२ दीनाबेन महासुखलाल जैन, चोटीला
१८३ निरंजना जैन, जबेरा
१८४ सुभद्राबाई जैन, मुरारिया
१८५ ताराचंद जैन, मलावत
१८६ सादुबेन केसरीसिंह जैन, वडोदा
१८७ अनुभाई केसरीसिंह जैन, वडोदा
१८८ साकरबेन सकराभाई जैन, वडोदा
१८९ मणीबेन सकराभाई जैन, वडोदा
१९० मंजुलाबेन नारायण जैन, वडोदा
१९१ डाह्याभाई नारायण जैन, वडोदा
१९२ शामुबेन नारायण जैन, वडोदा
१९३ रुपलबेन इंद्रवदन शाह, वडोदा
१९४ सोनलबेन इंद्रवदन शाह, वडोदा
१९५ प्रीतिबेन हसमुखलाल जैन, वडोदा
१९६ संतोषकुमार हसमुखलाल जैन, वडोदा
१९७ पूनमचंद आसाराम कोठारी, वडाली
१९८ मरधाबेन मणीलाल जैन, वडाली
१९९ हिम्मतलाल वालजीभाई जैन, वींछिया
२०० मणीबेन सोमचंदभाई जैन, वींछिया
२०१ मुक्ताबेन हिम्मतलाला जैन, वींछिया
२०२ रंभाबेन रतिलाल जैन, वींछिया
२०३ शारदाबेन शांतिलाल जैन, वींछिया
२०४ जबुबेन प्रागजी जैन, वींछिया
२०५ जयाबेन न्यालचंद जैन, वींछिया
२०६ कुसुमबेन चीमनलाल जैन, वींछिया
२०७ नर्मदाबेन ठाकरशीभाई जैन, वींछिया
२०८ नेमचंद बाहदुरमलजी जैन, इंदौर
२०९ नजरबाई नेमीचंद जैन, इंदौर
२१० चंदावतीबाई गुलाबचंद मोदी, इंदौर
२११ माणकबाई मिश्रीलालजी जैन, इंदौर
२१२ गुलाबबाई कस्तूरचंदजी सेठी, इंदौर
२१३ सजनबाई चंपालालजी झाला, इंदौर

२१४ गुणीमालाबाई पूनमचंद्रजी जेन, इंदौर
२१५ रतनबाई केसरीमलजी जैन, इंदौर
२१६ लक्ष्मीबाई मिश्रीलालजी जैन, इंदौर
२१७ चापबाई चांदमलजी गोधा, इंदौर
२१८ कंचनबाई चुनिलालजी जैन, इंदौर
२१९ सोनबाई मुन्नालालजी पंडित, इंदौर
२२० चोसरबाई चांदमलजी अजमेरा, इंदौर
२२१ सुंदरबाई रामनिवासजी बड़जात्या, इंदौर
२२२ रतनबाई जैन, इंदौर
२२३ कस्तूरबाई जैन, इंदौर
२२४ लक्ष्मीबाई जैन, इंदौर
२२५ विमलाबाई जैन पोरवाल, इंदौर
२२६ मूलीबाई गुलाबचंदजी जैन, इंदौर
२२७ सुभद्राबाई जैन, मुरारिया
२२८ बापुलाल पटवारी, बिजौलिया
२२९ हरीषकुमार जेठालाल जैन, मोरबी
२३० चंपालाल हीमचंद गाँधी, बावलवाडा
२३१ नगजीभाई दलीचंद फडीआ, बावलवाडा
२३२ रूपालीबहिन चंपालाल जैन, बावलवाडा
२३३ हीराचंदजी दाडमचंद जैन, बावलवाडा
२३४ मणिबहिन नगजीभाई जैन, बावलवाडा
२३५ चमेलीबहिन मगनलाल जैन, बावलवाडा
२३६ हाकरबेन हीराचंद जैन, बावलवाडा
२३७ दीवालीबेन खुमजी जैन, बावलवाडा
२३८ अमृबेन पानाचंद जैन, बावलवाडा
२३९ कस्तूरीबेन खुमजी जैन, बावलवाडा
२४० मोतीबेन नाथालाला जैन, बावलवाडा
२४१ रतनबेन मोतीलाल जैन, बावलवाडा
२४२ रतनबेन खेमचंद जैन, बावलवाडा
२४३ खुमजी दलीचंद फडीआ, बावलवाडा
२४४ अरजणभाई करमशी जैन, बावलवाडा
२४५ काशीबेन अरजणभाई जैन, बावलवाडा
२४६ चंपाबहिन लल्लुभाई जैन, बावलवाडा
२४७ चांदमल जैन, अजमेर
२४८ शकुंतला चांदमल जैन, अजमेर
२४९ राजाराम मुनीत, गुना
२५० कुमारी सरलाबेन जैन, अशोकनगर
२५१ चौथमल खेमराज जैन, अशोकनगर
२५२ भगवानदास नन्हेलाल जैन, पावागीर, ऊन
२५३ पूरनचंद बाबूलाल जैन, ऊन

'मोक्षमार्गप्रकाशक प्रतिदिन आधा घंटा स्वाध्याय कर भगवान महावीर के ढाई हजारवें निर्वाणोत्सव के वर्ष में संपूर्ण करूँगा।'—ऐसा नियम करके डाकखर्च का १/- भेजने से निम्न पते से आप मोक्षमार्गप्रकाशक ग्रंथ प्राप्त कर सकते हो।

—नेमिचंद्र जैन मगरीनीवाले, कोठी कमलागंज, ए.बी. रोड, शिवपुरी (म.प्र.)

पढ़िये और खोजिये

खास करके हमारे विद्यार्थी बंधुओं के लिये यह आयोजन है। यहाँ दस वाक्य दिये हैं—जो अपूर्ण हैं और इसी अंक में छपे हैं—सो आत्मधर्म पढ़कर आपको खोजना है और पूरा करना है। आत्मधर्म आपके हाथ में ही है—पढ़िये और खोजिये।

१. सर्वज्ञ के स्वरूप का ज्ञात होते ही उनके कहे हुए आगम का.....

२. भगवान सर्वज्ञदेव ने जो प्रत्यक्ष देखा, वही जिनागम में कहा है, इसलिये.....

३. वाह, जिनशास्त्र का अभ्यास किसप्रकार किया जाये ? और उसके फल में तत्काल ही कैसा आनंद आता है–यह बात आचार्यदेव ने यहाँ दिखलाई है; उसमें.....

४. श्री जिनवाणी कहती है कि आत्मा ज्ञानस्वरूप है; उसके द्रव्य–गुण–पर्याय तीनों ही.....

५. मुमुक्षुजीव जिनवाणी को पाकर उसमें क्रीड़ा करता है, अर्थात् जिनागम में आत्मा का जैसा स्वरूप कहा है, वैसा.....

६. जिनपद निजपद एकता, भेदभाव नहीं कोई; लक्ष कराने उसका.....

७. धर्मात्मा की ऐसी दशा समझाकर आचार्यदेव ने अनुभूति का मार्ग खोल दिया है। ऐसी अनुभूति ही महावीर भगवान का.....

८. सर्वज्ञदेव के चेतनस्वरूप द्रव्य–गुण–पर्याय को जानकर, उनके साथ अपने आत्मा के द्रव्य–गुण–पर्याय का मिलान करने से.....

९. समस्त जिनागमों में वीतरागभाव को ही तात्पर्य कहा है। वीतरागता स्वद्रव्य.....

१०. श्री जिनवाणी की परम महिमा दिखाकर, मुमुक्षु जीव को उसके सम्यक् अभ्यास से आत्मप्राप्ति का शौर्य जगानेवाला यह प्रवचन पढ़कर जिज्ञासु जीव.....

[खोजकर मात्र पृष्ठ नम्बर लिखकर भेजिये; भेजनेवाले को महावीर भगवान की पुस्तिका भेंट दी जायेगी; आपका पूरा पता लिखना न भूलें।]

भेजने का पता—

संपादक आत्मधर्म : सोनगढ़ (सौराष्ट्र)

श्री दसलक्षणी-पर्युषणपर्व समाचार

निम्नलिखित गाँव-शहरों में सोनगढ़ की ओर से विद्वान भाई भेजे गये थे, हजारों जिज्ञासुओं ने उत्साह से लाभ लिया था; और सभी जगह में विशेष प्रवचन-पूजन-कलशाभिषेक-रथयात्रा-शिक्षणवर्ग आदि के द्वारा धर्मप्रभावना होने का समाचार आया है—

बडौत, झाँसी, सीवनी, महू, रतलाम, खैरागढ़, अशोकनगर, मद्रास, सोलापुर, लाखेरी, सीहोर (म.प्र.), चांदखेड़ी, ललितपुर, नागपुर, बेलनगंज-आगरा, जयपुर, आदर्शनगर, वींछिया, मोरबी, वांकानेर, राजकोट, बम्बई एवं उसके उपनगर; आरोन, वीना, शहपुरा (मिटौनी) इन्द्राना (म.प्र.), मोशी (अफ्रीका), नैरोबी, बरोडा, हरदा (म.प्र.), बंडा (बेलई, सागर), खुरई, जबलपुर, पनागर, इम्फाल (मनीपुर), हिम्मतनगर, सिकन्दराबाद-हैदराबाद, भोपाल-पिपलानी, बेंगलोर, कलकत्ता (फतेपुरवाले बाबूभाई) गौहाटी (आसाम), महिदपुर, भिण्ड, खनियांधाना (शिवपुरी), बेगमगंज (म.प्र.) एत्मादपुर, उदयपुर, लोहारदा, शिवपुरी।

तदुपरांत पर्युषणपर्व के विशेष समाचार यह है—

रतलाम के पत्र में विशेष प्रसन्नता के साथ लिखते हैं कि पंडित श्री जेठमलजी 'जैनबंधु' ने हमें दिखाया कि श्रावक को सर्वज्ञ की श्रद्धा एवं शुद्धदृष्टि होनी चाहिये, तदुपरांत उनके व्यवहार आचरण जिनपूजा-साधर्मीप्रेम-स्वाध्यायादि कैसे होते हैं, उनका भी सर्वांगसुंदर वर्णन किया। वर्तमान में प्रत्येक बालक-बालिका को धर्मसिद्धांत की शिक्षा दिलाना चाहिये, जिससे उनमें धार्मिकसंस्कार बने रहेंगे, और आगे चलकर वे ही उच्च कोटि के विद्वान होकर संसार के समक्ष जैनधर्म का झंडा लहरायेंगे। इस क्षेत्र में सोनगढ़ का प्रयत्न सराहनीय एवं अनुकरणीय है।

अशोकनगर के पत्र में लिखते हैं कि श्री कनुभाई ने समयसार तथा रत्नकरंडश्रावकाचार का प्रवचन किया, सर्वज्ञप्रणीत वीतराग जैनधर्म की अपूर्व महिमा का दिग्दर्शन कराया। जिनेन्द्र-भक्ति-पूजनादि कार्यक्रम भी बहुत उत्साहपूर्वक होता था।

खैरागढ़ (म.प्र.) यहाँ दसलक्षणपर्व में सिद्धचक्र विधान धामधूम से किया गया;

आसपास के गाँवों के बहुत लोग प्रभावित हुए; सोनगढ़ की ब्रह्मचारी ताराबेन एवं उनके माताजी धूड़ीबाई (कंचनबाई) खेमराज ने ८-८ उपवास किया; अनेक बहनों ने रत्नत्रयविधान पूर्ण करके उद्यापन किया; पूजन-प्रवचनादि में समाज ने उत्साह से लाभ लिया। सभी प्रकार से अच्छी धर्मप्रभावना हुई। अंत में सजधजपूर्वक श्री जिनेन्द्रदेव की शानदार रथयात्रा निकली थी।

मद्रास के पत्र में लिखते हैं कि श्री नेमीचन्दभाई के एक मास आने से शिक्षण वर्ग द्वारा जैनसिद्धांत का ज्ञान करने से सबको बहुत आनंद हुआ। पर्युषणपर्व अच्छी तरह मनाया गया। मुमुक्षु मंडल अच्छी प्रगति कर रहा है।

लाखेरी (राजस्थान) के पत्र में लिखते हैं कि यहाँ भाईश्री पदमकुमारजी के आने से दसलक्षणपर्व बहुत आनंद से संपन्न हुआ। एवं श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मंडल की स्थापना की गई। जैन पाठशाला भी अच्छी तरह चल रही है।

सीहोर (म.प्र.) से लिखते हैं कि यहाँ मुमुक्षु मंडल की स्थापना आनंदपूर्वक हुई है। दसलक्षणपर्व में एम.एल. जैन की सुपुत्री कु. विजयकुमारी ने ११ उपवास किये थे।

खानपुर (झालावाड-राजस्थान) अतिशयक्षेत्र चांदखेड़ी में समवसरण की रचना हो रही है। जैनसमाज में अच्छी धर्मप्रभावना हुई।

ललितपुर : पूरे दिन भरचक कार्यक्रमों के उपरांत रात्रि के समय धार्मिक संवादों के द्वारा अच्छी प्रभावना हुई। लोगों ने बहुत रुचि से लाभ लिया। 'मम्मी, कैसे थे महावीर?' इत्यादि प्रोग्राम बहुत अच्छे थे।

जयपुर : इस वर्ष स्थानीय पंडित डॉ. हुकमचन्दजी जयपुर में ही रहे; श्री पंडित टोडरमल स्मारक भवन में तथा बड़े दीवानजी के मंदिर में (राजस्थान जैनसभा के तत्त्वावधान में) सैंकड़ों श्रोताओं ने आध्यात्मिक प्रवचनों का लाभ लिया। आदर्शनगर में पंडित प्रकाशचन्दजी हितैषी तथा सिवाड़ में श्री देवीलालजी गये थे।

नागपुर : शिक्षणशिविर के बाद अच्छी धार्मिक जागृति बढ़ रही है; निर्वाण महोत्सव के संबंध में भी बहुत उत्साह है। हजारों की संख्या में सोनगढ़ से पुस्तक मंगवाये हैं।

आरौन (म.प्र.) : प्रभातफेरी, पूजन, प्रवचन एवं पाठशाला के बच्चों द्वारा धार्मिक नाटक आदि से पर्युषणपर्व में अच्छी जागृति आई। निर्वाणमहोत्सव के उपलक्ष में महावीर भगवान का धर्मचक्र (मानस्तंभ जैसा) तथा अन्य अनेक आयोजन बन रहा है।

मोसी तथा नैरोबी (अफ्रीका) से श्री रणमलभाई तथा जेठालालभाई लिखते हैं कि यहाँ मुमुक्षु मंडल का कार्य नियमित चल रहा है। साथ में अपने 'भगवान महावीर' का निबंध भी भेजा है।–धन्यवाद!

इंद्राना (जबलपुर) : प्रवचन का लाभ उत्साह से लिया। बच्चों को शिक्षण देने के लिये पाठशाला शुरु की गई है। पाठशाला चलानेवाले शिक्षक की आवश्यकता है। सिंघई बाबुलाल टोपीवाले बीना (म.प्र.) को लिखें। मिटौनी–शहपुरा में समाज के सभी लोगों ने एकसाथ हिलमिल कर शांति से लाभ लिया।

इम्फाल (मणिपुर) : पर्युषण में विशेष जागृतिपूर्वक लोगों ने लाभ लिया; जैन पाठशाला शुरु की गई। आत्मधर्म के २५ ग्राहक नये बनें। सोनगढ़ से बहुत साहित्य मंगवाया है। श्री पंडित ज्ञानचंदजी (विदिशा) की प्रेरणा से मुमुक्षु मंडल की स्थापना हुई। सभी को बहुत उत्साह है।

हिम्मतनगर : विद्वान भाईश्री खीमचंदभाई जे. शेठ के आने से अच्छी जागृति आयी; हिम्मतनगर के उपरांत सावरकांठा के अनेक गाँवों के जिज्ञासुओं ने भी लाभ लिया; प्रवचन के उपरांत सामूहिक पूजन–भक्ति–सामायिकादि कार्यक्रम बहुत उत्साह से होता था।

खुरई (सागर) : जैन घर ४०० है; सभी ने उत्साह से लाभ लिया; श्रीमान् नेमीचंदजी पाटनी आगरावाले आये थे। आत्मधर्म के १३५ ग्राहक बनें। यहाँ भविष्य में धार्मिक शिक्षणशिविर खोलने की भी योजना है। २५००वाँ निर्वाण महोत्सव के निमित्त से मानस्तंभ तथा स्वाध्यायभवन भी बनाने का आयोजन चल रहा है। उद्घाटन के प्रसंग पर स्वामीजी को निमंत्रण देकर बुलाने की भावना है।

महिदपुर : दसलक्षणी पर्व के दिनों में तत्त्वज्ञान का विशेष लाभ लेने के लिये, तथा पूजनादि कार्यक्रमों के लिये, प्रतिवर्षानुसार इस वर्ष भी पूरे समाज ने अपनी दुकानें तथा व्यवसाय बंद रखा।

पिपलानी (भोपाल) : श्री आदिनाथ भगवान का भव्य जिनमंदिर तैयार हो रहा है; पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव होनेवाला है। पूज्य स्वामीजी को निमंत्रण किया है। इस जिनालय का शिलान्यास प्रमुख श्री नवनीतभाई जवेरी ने किया था। मंदिर में सवा पाँच फुट की पद्मासन बड़ी भव्य प्रतिमा विराजमान होगी। तथा भगवान श्री कुन्दकुन्द स्वाध्यायभवन भी बननेवाला है। दूसरी मंजिल पर भगवान महावीर की पाँच फुट की खड्गासन-मनोज्ञ प्रतिमा विराजमान होगी। सब प्रकार की तैयारियाँ चल रही हैं।

एत्मादपुर में ब्रह्मचारी हेमराजजी के द्वारा अच्छी धर्मप्रभावना हो रही है; दसलक्षणी पर्व में तेरह द्वीप का पाठ हुआ; युवकों में तथा महिला समाज में भी अच्छी जागृति आई है।

वांकानेर में दसलक्षणपर्व आनंद से संपन्न हुआ; अकलंक-निकलंक का धर्मप्रभावक नाटक युवकों युवकों ने किया था।

— पर्युषणपर्व में विद्वान भेजने के लिये एक सौ से अधिक स्थानों से माँग आती है; परंतु सभी जगह भेज नहीं सकते। करीब ८० स्थानों पर विद्वानों को भेजे गये थे, अन्य स्थानों के मुमुक्षु संघ अपने स्थानीय विद्वान से ही काम चला लेते हैं। अभी तक बहुत से स्थानों के समाचार प्राप्त हो चुके हैं-जो संक्षेप में यहाँ दिया गया है। सारे समाज में अध्यात्म शैली से जैनसिद्धांत समझने की तीव्र उत्कंठा जागृत हो रही है, और मोक्ष के लिये प्रथम आत्मा का सम्यग्ज्ञान तथा सम्यग्दर्शन अवश्य करना चाहिये, इसके बाद में चारित्र भी मुमुक्षु का कर्तव्य है-यह बात समाज में प्रसिद्ध हो रही है। वीरनिर्वाण के २५०० वर्षीय निर्वाणमहोत्सव के पर्व में जिनेन्द्र शासन की बहुत प्रभावना हो, और समाज में कहीं भी वैरविरोध न हो यही भावना।

— जय महावीर। — ब्रह्मचार हरिलाल जैन

— 'मैं जब आत्मधर्म पढ़ता हूँ तो ऐसा अनुभव होता है कि स्वामीजी मेरे सामने उच्चासन पर विराजमान हैं और मैं उनके अमृतमयी वचन उन्हीं के पवित्र मुख से साक्षात् सुन रहा हूँ। इससे प्रेरित होकर अध्यात्मभाव का गीत भेज रहा हूँ—

('धारो ज्ञानानंदस्वभाव....' इत्यादि गीत भेजा है।)

पत्र लेखक जिज्ञासु है - रतनलाल जैन, रामगढ़ (अलवर)। ऐसे हजारों जिज्ञासुओं को गुरुदेव का उपदेश प्राप्त करने का साधन 'आत्मधर्म' है; उसमें गुरुदेव के ही अंतर के भाव

जिनवाणी अनुसार आते हैं। अत: इसके संबंध में गलत अफवायें फैलाने का प्रयत्न करके धर्मप्रचार में विघ्न मत कीजिये।

राघौगढ़, दिल्ली, सनावद, छिंदवाडा एवं और भी अनेक जगह से जोरपूर्वक मांग आ रही है कि गुजराती की तरह हिन्दी आत्मधर्म में भी 'बालविभाग' आना चाहिये। आप सबकी बात योग्य है, तथा आत्मधर्म में नियमितरूप से बालविभाग देने की पूरी आवश्यकता है। शीघ्र ही इसकी पूर्ति के लिये हम प्रयत्न कर रहे हैं। आप भी लेख, काव्य, पहेलियाँ आदि छोटी-छोटी रचनायें भेजिये :

पता - संपादक आत्मधर्म, सोनगढ़ (सौराष्ट्र) ३६४२५०

आत्मधर्म का बालविभाग

भगवान महावीर २५०० वाँ निर्वाणमहोत्सव

प्रिय साधर्मी बालकों! तुम्हें जानकर प्रसन्नता होगी कि जब सारे देश में भगवान महावीर का २५०० वर्षीय निर्वाणोत्सव मनाया जा रहा है, उसी समय हम तुम्हारे लिये आत्मधर्म में खास बालविभाग का प्रारंभ कर रहे हैं। तुम इसको पढ़ते रहना, और उसकी प्रत्येक योजनाओं में भाग लेते रहना।

बंधुओं! तुम बच्चे हो तो, परंतु किसके? वीरप्रभु के। तुम वीरप्रभु की संतान हो; आगे जाकर तुम्हें ही वीर एवं महावीर बनना है। अत: अभी से आत्मा में वीरमार्ग के संस्कार का सींचन करते रहना। महावीर शासन को पाकर हमें अपने जीवन में आत्महित का बहुत अच्छा अवसर मिला है। हमें वीर के मार्ग में आगे बढ़ना है।

तुम प्रतिदिन जिनमंदिर जाना; तत्त्व का अभ्यास करना, तथा एक-दूसरे पर बहुत

वात्सल्य-प्रेम रखना। आत्मधर्म के द्वारा तुमको अच्छी-अच्छी बातें मिलती रहेगी, उसे तुम आनंद से पढ़ते रहता।

इस विभाग के द्वारा बच्चों का उत्साह देखकर वडील वर्ग भी खुश होवेंगे। बन्धुओं, आप अपने बच्चे को प्रोत्साहन देते रहना। —संपादक, ब्रह्मचारी हरिलाल जैन (सोनगढ़)

आत्मधर्म के लिये उत्सुकता

— हमारे जिज्ञासु साधर्मी आत्मधर्म के प्रति कितने भावुक हैं तथा उसे पढ़ने के लिये कैसे लालायित है, यह आप मुरारिया (सिरोज) के पत्र में देखेंगे। श्री विरधिमलजी जैन लिखते हैं कि—''परम पूजनीय कुन्दकुन्दस्वामी की देन है जो कि उन्होंने साक्षात् तीर्थंकरों की वाणी अपने अंतर में घोलकर ग्रंथों द्वारा सुरक्षित पहुँचायी। परम पूज्य कानजीस्वामी का परम उपकार है जो समयसार जैसे ग्रंथों का सार पढ़ने तथा सुनने-समझने के लिये हम उत्सुक हैं तथा अपना ज्ञानस्वभाव आत्मा क्या है व तत्त्वों का स्वरूप आदि दिखानेवाली जिनवाणी का क्या महत्त्व है? उसे समझने की जिज्ञासा हमारे में पैदा होती है। घर बैठे 'आत्मधर्म' द्वारा समयसार-नियमसार-प्रवचनसारादि के प्रवचन हम बड़ी उत्सुकता से पढ़ते हैं, इसलिये आत्मधर्म समय पर मिले, यही हमारी जिज्ञासा है-ताकि हम ज्ञान की उन्नति करें तथा अपने को समझने का प्रयत्न करें।''

❋ श्रीमान् साहू शांतिप्रसादजी जैन के दो पत्र ❋

[जैन समाज के नेता श्रीमान् सेठ शान्तिप्रसादजी साहू अगस्त मास में पटना में आकस्मिक अस्वस्थ हो गये थे, सारी समाज में चिंता फैल गई थी; अब आपकी तबीयत अच्छी है और आप दिल्ली आ गये हैं; वहाँ से आपका पत्र प्राप्त हुआ है जो यहाँ समाज की जानकारी हेतु दिया जाता है; साथ में हम भावना भाते हैं कि आप दीर्घकाल तक जैनसमाज का नेतृत्व सम्भालकर धर्म की सेवा करते रहे तथा जैनशासन के प्रताप से शीघ्र ही अपने आत्महित का वीरपथ प्राप्त कर लें।]

(पत्र - १)

प्रिय बन्धु, नई दिल्ली, तारीख २ अक्टूबर १९७४

भगवान महावीर के २५०० वें निर्वाण महोत्सव के पुण्य स्मरण से जीवन में जो साता

और समता प्राप्त हुई है, उसकी अनुभूति से अनुप्राणित होकर आपका जो मेरे प्रति प्रेमभाव रहा है, उसका मैं आदर और सम्मान करता हूँ।

आकस्मिक अस्वस्थता के कारण निर्वाण महोत्सव के दायित्वों के निर्वाह में मुझमें कुछ असमर्थता आ गई है। मैं अब पटना से दिल्ली आ गया हूँ और स्वास्थ्य लाभ की गति सर्वथा सन्तोषजनक है। चिकित्सकों का कहना है कि लगभग ३-४ सप्ताह में मैं अबसे अधिक सक्रिय हो जाऊँगा, यद्यपि यात्रा पर पर्याप्त प्रतिबंध रहेगा।

यह २५००वाँ निर्वाण महोत्सव जो पुण्य और पवित्रता का दाता है, संपूर्ण जैन समाज में प्रेम और भ्रातृ-भाव के विकास का स्रोत बना है, यह निरंतर बढ़ता रहे। महोत्सव की योजनाओं और कार्यक्रमों में हम सब अधिक से अधिक रस लें। महोत्सव के दायित्वों के निर्वाह में सबका योगदान ही, इसकी सफलता का सम्बल है। सामाजिक सद्भाव और धार्मिक उत्साह का यह बीज दिन पर दिन विकसित होगा और भविष्य में प्रचुरता से फूले-फलेगा तथा समाज और देश में सुख और समता लाएगा।

—शान्तिप्रसाद जैन

(पत्र - २)

प्रिय बन्धु, दिल्ली, दिनांक ६-८-७४

ब्रह्मचारी हरिलालजी लिखित अंग्रेजी का 'जैन प्राइमर' और हिन्दी का 'भगवान महावीर का इष्ट उपदेश—अहिंसा परमो धर्मः' की एक-एक प्रति आपको भेज रहा हूँ। बच्चों का साहित्य अपने समाज में बहुत ही कमती हैं और बच्चों के साहित्य के लिए सभी जगहों से माँग आती रहती हैं। आपकी समाज उचित समझे तो इन्हें मंगाकर अपने यहाँ वितरित करायें। व इनका आर्डर निम्नलिखित पते पर रुपयों सहित भेज देवें जिससे कि वे आपको किताबें भेज दें।

श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट
सोनगढ़ (सौराष्ट्र)

आपका
शांतिप्रसाद जैन साहू, अध्यक्ष

[उक्त दो पुस्तकों के अतिरिक्त तीसरा पुस्तक 'भगवान महावीर' भी सुंदर, प्रचार के योग्य है। मूल्य भगवान महावीर (१०० प्रति के १५ रुपये); JAIN PRIMER (०-५०); अहिंसा परमो धर्मः (०-५०); JAIN PRIMER अर्थात् 'जैन बालपोथी' हिन्दी में भी मिल सकती है (०-५०) इसकी सवा लाख से अधिक प्रतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं।]

* समकित की सुगंध महकी है *

यदि भवसागर दुख से भय है तो तज दो परभाव को।
करो चिंतवन शुद्धातम का पालो सहज स्वभाव को॥
नर पशु देव नरक गतियों में बीता कितना काल है।
फिर भी नहीं समझ पाए यह भववन अति विकराल है॥
तजो शुभाशुभ भाव यही शुद्धोपयोग की ढाल है।
किया तत्त्व निर्णय जिसने वह जिनवाणी का लाल है॥
द्रव्यदृष्टि से समकित निधि पा कर लो दूर अभाव को।
करो चिंतवन शुद्धातम का पालो सहज स्वभाव को॥
पाप पुण्य दोनों जगस्रष्टा इनमें दुख भरपूर है।
इनकी उलझन सुलझ न पाई तो फिर सुख अति दूर है॥
इसप्रकार परभावों में जो भी प्राणी चकचूर है।
पर विभाव को नष्ट करे जो वह ही सच्चा शूर है॥
समकित औषधि से अच्छा कर लो अनादि से घाव को।
करो चिंतवन शुद्धातम का पालो सहज स्वभाव को॥
बीती रात प्रभात हो गया जिनवाणी का तूर्य बजा।
जिसने दिव्यध्वनि हृदयंगम की उसके उर सूर्य सजा॥
आत्मज्ञान का देख उजाला भाग रहे पर भाव लजा।
चिदानंद चैतन्य आत्मा का अंतर में नाद गजा॥
समकित की सुगंध महकी है देखो ज्ञायक भाव को।
करो चिंतवत शुद्धातम का पालो सहज स्वभाव को॥

[— राजमल जैन, भोपाल]

नूतन वर्ष की बोनी में मोक्षमार्ग का आशीर्वाद

[साक्षात् मोक्षमार्ग के साररूप वीतरागता जयवंत वर्तो]

मोक्षमार्ग की प्रेरणा करते हुए श्री कुन्दकुन्दस्वामी पंचास्तिकाय की गाथा १७२ में कहते हैं कि—वीतराग होकर ही भवसागर को तिरा जाता है, अतः मोक्षेच्छु के कहीं पर भी, कुछ भी राग करना इष्ट नहीं।

ऐसे वीतरागी मोक्षमार्ग के प्रति प्रमोदपूर्वक 'स्वस्ति साक्षात् मोक्षमार्ग...' ऐसा कहकर आचार्यदेव आशीर्वाद देते हैं कि हे भव्य जीवो! महावीर भगवान ने वीतरागभावरूप मोक्षमार्ग के द्वारा मोक्ष को प्राप्त किया, और तुम भी उसी मार्ग का सेवन करो।–नूतन वर्ष की मंगल भेंटस्वरूप मोक्षमार्ग का यह मंगल संदेश स्वामीजी ने दिया है।

दीपावली, यह मोक्ष का मंगल पर्व है, इस दिन महावीर परमात्मा में अभूतपूर्व सिद्धपद प्रगट होकर मोक्ष का नूतन वर्ष प्रारंभ हुआ। नूतन वर्ष में बोनी (आशीर्वादपूर्वक मंगल भेंट) देने का रिवाज है; यह नूतन वर्ष की बोनी (भेंट) दी जाती है। भव्य जीव के लिये सर्वोत्कृष्ट वस्तु मोक्षमार्ग है, उसकी भेंट महावीर भगवान ने जगत को दी है, वीतराग संतों भी यही भेंट दे रहे हैं। अपने में मोक्षमार्ग प्रगट करना यही अपूर्व नूतनवर्ष है, यही मोक्ष का सच्चा उत्सव है। मोक्ष की आराधना के बिना उसका उत्सव कैसा?

भगवान के मोक्ष का उत्सव कौन मनाये? जो मोक्षार्थी हो, वह मोक्ष का उत्सव मनावें। मोक्षार्थी जीव किसप्रकार से निर्वाण प्राप्ति करता है? साक्षात् मोक्ष का अभिलाषी भव्य जीव अत्यंत वीतराग होकर, भवसागर को तिरकर शीघ्र ही निर्वाण को पाता है। भगवान ने भी शुद्ध आनन्दस्वरूप में लीन होकर वीतरागता के द्वारा निर्वाण प्राप्त किया, और निर्वाण का यही मार्ग भव्यजीवों को दिखलाया। हे भव्यजीवो— साक्षात् वीतरागता ही मोक्षमार्ग है; राग के किसी भी अंश को मोक्षमार्ग न समझो। परमागम के सारभूत वीतरागता जयवंत वर्तो—जो कि साक्षात् मोक्षमार्ग है। सभी शास्त्रों का सार कहो या जिनशासन का तात्पर्य कहो, वह है वीतरागता। भव्यजीव किसप्रकार भवसागर को तिरते हैं?—वीतरागता से ही तिरते हैं; बस, वीतरागता ही समस्त जिनवाणी का हार्द है, वही संतों के हृदय का हार्द है। कहीं भी, जरा सा भी राग साथ में

रखकर भव से तिरा नहीं जाता, समस्त राग को छोड़कर, अत्यंत वीतराग होकर ही भव से तिरा जाता है।

अधिक क्या कहा जाये ? सभी तीर्थंकर भगवंतों ने ऐसे वीतरागी मोक्षमार्गरूप उपाय से ही भवसागर को पार किया है, और अन्य मुमुक्षु के लिये भी वीतरागता का ही उपदेश दिया है। ऐसे साक्षात् मोक्षमार्ग के प्रति प्रमोदभाव से आचार्यदेव कहते हैं कि अहो, जयवंत रहो वीतरागता—जो कि साक्षात् मोक्षमार्ग का सार है, तथा समस्त जिनवाणी का जो तात्पर्य है।

तीर्थंकरों का जो मोक्षमार्ग है, वह हमने निश्चित कर लिया है, उसी मार्ग को हमने अंगीकार किया है, मोक्ष साधने का कार्य चल ही रहा है। ऐसा मोक्षमार्ग जिन्होंने दिखलाया, उन अरहंत भगवंतों को नमस्कार हो।

मोक्षमार्ग के प्रारंभ से पूर्णता तक वीतरागता ही मोक्षमार्ग है, बीच में आनेवाला कोई राग मोक्षमार्ग नहीं है। मोक्षमार्गरूप में एक वीतरागता ही जयवंत है; राग का तो मोक्षमार्ग में से क्षय होता जाता है। ऐसे वीतरागभावरूप मोक्षमार्ग को पहचानकर उसकी आराधना करना, यह महामंगल है।

लीजिये, यह नूतन वर्ष में आशीर्वादपूर्वक मंगल बोनी!-'तुम्हें ऐसा मोक्षमार्ग प्राप्त हो!' मोक्षमार्ग की आराधना, यही मोक्ष का महोत्सव है, यही वीतराग संतों द्वारा दी गई मंगल बोनी है; यही जिनशासन की सेवा है, और ऐसा करनेवाला जीव—उस मार्ग पर जा रहा है कि जिस मार्ग से भगवान महावीर मोक्ष पधारे।

जय महावीर... जय मोक्षमार्ग!

२५००वें निर्वाण वर्ष के उपलक्ष में २५०० पैसे (२५ रुपये) बचाईये

निर्वाण महोत्सव को लेकर देशभर में बड़ी-बड़ी योजनायें बन रही हैं; परंतु हमें तो ऐसी छोटी-छोटी योजना बनानी है कि छोटे-छोटे बच्चे भी जिसमें भाग ले सकें। इस योजना के द्वारा बालकोपयोगी छोटा-छोटा धार्मिक साहित्य, धार्मिक बोध देनेवाली चीज़-वस्तुओं, बच्चों की इनाम देनेवाली योजनाओं—इत्यादि कार्यक्रम रखा जायेगा—जिसमें भाग लेकर छोटे-बड़े सब आनंदित होवेंगे।

इसमें सहकार देने के लिये आपको इतना करना है कि, अपने छोटे-छोटे खर्चे में से २५०० पैसे (माने पच्चीस रुपये) बचाकर इकट्ठा करना है; आप दीपावली में एटम-हवाई-चकरी आदि फटाके न फोड़ें, सिनेमा न देखें, तब सुगमता से आप २५ रुपये की बचत कर लेंगे। बाद में यह रकम आप (आत्मधर्म बालविभाग, सोनगढ़, सौराष्ट्र ३६४२५० इस पते पर) भिजवा दें; निर्वाण महोत्सव की बालोपयोगी योजनाओं में उसका सदुपयोग होगा। बन्धुओं, दूसरी भी एक छोटीसी बात पर हमें ध्यान देना है:—हमारे बालविभाग के बहुत से सभ्य में, जैसे विशेष साधनसंपन्न हैं—वैसे मध्यम वर्ग के भी हैं; ऐसा कोई सभ्य आपका मित्र भी होगा। तो ऐसा अपना साधर्मी-सभ्य कदाचित् कुछ कम रकम इकट्ठी कर पाये, तो उसकी शेष रकम की पूर्ति करके तुम उसको सहयोग देना। यह योजना वैसे तो इस दीवाली से लेकर दूसरी दीवाली तक चालू रहनेवाली है; परंतु जहाँ तक हो सके दीवाली के ऊपर ही आप आपका नाम तथा रकम भेजने का प्रयत्न करना। अब तक जिनकी ओर से पच्चीस रुपये आ गये हैं, उनके नाम यहाँ दिये जाते हैं—

१ सुरेशचंद जेवंतलाल जैन, बम्बई
२ प्रवीणाबेन जेवंतलाल जैन, मोरबी
३ राजीवकुमार जगदीशचंद्र जैन, बम्बई
४ अमिषाकुमारी जगदीशचंद्र जैन, बम्बई
५ हितेशकुमार शांतिलाल जैन, बम्बई
६ रीटाबेन शांतिलाल जैन, बम्बई
७ रजनीकांत छोटालाल जैन, बम्बई
८ कमलेश रजनीकांत जैन, बम्बई
९ रेखाबेन रजनीकांत जैन, बम्बई
१० सोनलबेन रजनीकांत जैन, बम्बई
११ राजेशकुमार हसमुखराय जैन, बम्बई
१२ हसमुखराय छोटालाल जैन, बम्बई
१३ प्रदीपकुमार मनसुखलाल देसाई, सोनगढ़
१४ सुधर्माबेन मनसुखलाल देसाई, सोनगढ़

१५ भावनाकुमारी मगनलाल जैन, सोनगढ़
१६ अरुणाबेन प्रवीणचंद्र जैन, बम्बई
१७ ज्योतिबेन निरंजन जैन, सूरत
१८ विभाबहेन अमरचंद जैन, वांकानेर
१९ कमलेशकुमार दुलीचंद जैन, खैरागढ़
२० साधनाबेन दुलीचंद जैन, खैरागढ़
२१ मोतीलाल कंवरचंद जैन, खैरागढ़
२२ पन्नालाल खेमराज जैन, खैरागढ़
२३ नानालाल जगजीवन जैन, नेपाल
२४ चेतनाकुमार चंद्रकांत घडीयाली, मोरबी
२५ प्रकाश रमेशकुमार घडीयाली, मोरबी
२६ निखिलकुमार इन्दुलाल जैन, मोरबी
२७ केतनाबेन रजनीकांत जैन, मोरबी
२८ जतिनकुमार अरविंद जैन, मोरबी
२९ नितिनकुमार अनुपचंद जैन, मोरबी
३० बुद्धिचंद बाबालाल जैन, मोरबी
३१ भरतकुमार सुंदरलाल जैन, मोरबी
३२ वासंतीबेन भरतकुमार, भावनगर
३३ पंकज विनयचंद्र अजमेरा, बम्बई
३४ उल्लासकुमार मनसुखलाल, सोनगढ़
३५ गांडाला अेच. मोदी, मद्रास
३६ कंचनबेन चोटीलावाला, सोनगढ़
३७ जयेन्द्रकुमार प्रवीणचंद्र, ध्रांगध्रा
३८ सविताबेन रसिकलाल, राजकोट
३९ जेकुंवरबेन मयाचंद, सोनगढ़
४० रमेश एच. भायाणी, बम्बई
४१ शांतिलाल छगनलाल, भावनगर
४२ ज्योत्स्नाबेन भूपतराय, उमराला
४३ किरणबेन अशोककुमार, अहमदाबाद
४४ छोटालाल मोहनलाल, अहमदाबाद
४५ प्रीतिबेन बृजलाल, जलगांव
४६ समजुबेन गोविंदजी, ध्रांगध्रा
४७ घेवरचंद पन्नालाल, खैरागढ़
४८ घेवरचंद जसवंतराय, खैरागढ़
४९ नीताबेन वसंतराय, भावनगर
५० स्व. उषाबेन वृजलाल, जलगाँव
५१ सुंदरबेन हीराबेन, इंदौर
५२ समुबेन केशवजी वढवाणवाला, सोनगढ़
५३ चंचलबेन वखतचंद वणीवाला, सोनगढ़
५४ रेखाबेन वृजलाल जैन, बम्बई
५५ रश्मिबेन वृजलाल जैन, बम्बई
५६ अरुणाबेन वृजलाल जैन, बम्बई
५७ सुरेश मोहनलाल जैन, भावनगर
५८ गुलाबदास लालजी जैन, धारवार
५९ धनलक्ष्मी गुलाबदास जैन, धारवार
६० गजेन्द्र गुलाबदास जैन, धारवार
६१ रंजन गजेन्द्र जैन, धारवार
६२ किरण गजेन्द्र जैन, धारवार
६३ दीप्ति गजेन्द्र जैन, धारवार
६४ जयेश गजेन्द्र जैन, धारवार
६५ संजय प्रतापराय जैन, राजकोट
६६ ज्योत्स्ना बाबूभाई जैन, बम्बई
६७ मनिशकुमार ईश्वरलाल जैन, राजकोट
६८ भावनाबेन ईश्वरलाल जैन, राजकोट

६९ अरुणकुमार बृजलाल जैन, राजकोट
७० भूपतराय छोटालाल भायाणी, —
७१ भारतीबेन कामदार जैन, बम्बई
७२ भूपेन्द्रकुमार जैन, मलाड
७३ विपुलकुमार कनैयालाल, कांदीवली
७४ मनीषकुमार कनैयालाल जैन, कांदीवली
७५ चीमनलाल प्रेमजी जैन, मोडासा
७६ जयंतीलाल पानाचंद गाँधी, व्यारा
७७ के.एम. कोठारी, वर्ली
७८ शरदकुमार जैन, उज्जैन
७९ मरघाबेन मणीलाल जैन, सोनगढ़
८० अरविंद जयंतीलाल जैन, गोंडल
८१ राजेश चीमनलाल जैन, हैदराबाद
८२ जयश्रीबेन चीमनलाल जैन, हैदराबाद
८३ नम्रताकुमारी सुरेन्द्रकुमार जैन, सनावद
८४ राकेशकुमार सुरेन्द्रकुमार जैन, सनावद
८५ सोनाबेन डुंगरशी कच्छी जैन, सोनगढ़
८६ मुक्ताबेन चंद्रशंकर तथा कांताबेन, वढवाण
८७ राष्ट्रीयशाला (हा.ब्र.विद्याबेन जैन) मोरबी
८८ अजितकुमार इंदुलाल जैन, मोरबी
८९ दीवालीबेन चीमनलाल जैन, राजकोट
९० आरतीबेन हसमुखलाल जैन, बम्बई
९१ राजू हसमुखलाल जैन, बम्बई
९२ मीन्टु दीलीपकुमार जैन, दिल्ली
९३ रुपालीबेन अमरचंद जैन, भावनगर
९४ दीप्तिबेन रतिलाल जैन, अहमदाबाद
९५ निकुंजकुमार रतिलाल जैन, अहमदाबाद
९६ नैनाबेन हीरालाल बी. जैन, बम्बई
९७ मोना भरतकुमार एच. जैन, बम्बई
९८ राजेशकुमार मुकुन्दराय जैन, भावनगर
९९ दीप्तिबेन मुकुन्दराय जैन, भावनगर
१०० कुमारी चेतनाबेन चंदुलाल डी. गाँधी, बड़ौदा
१०१ मनीषाबेन विपिनचंद आर., अहमदाबाद
१०२ पूनमचंद आशाराम जैन, वडाली
१०३ अमितकुमार ज्योतीन्द्र जैन, राजकोट

[शेष नाम अगले अंक में]

वन्दे तद्गुणलब्धये—

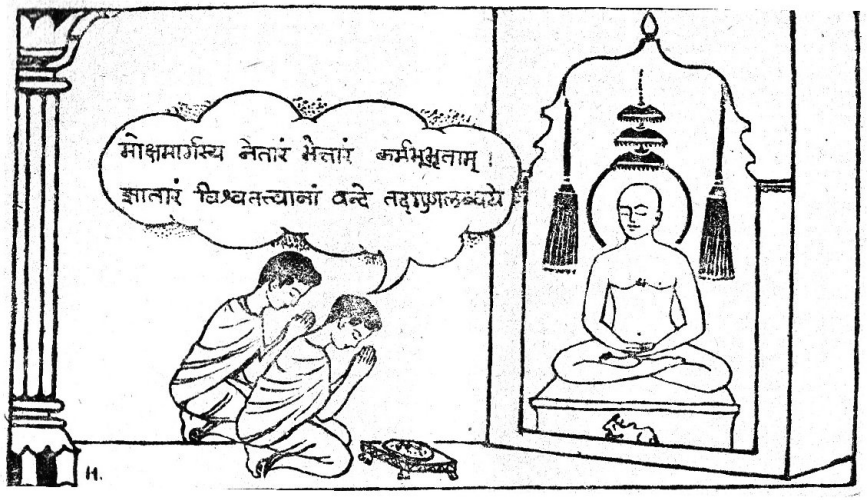

मोक्षमार्गस्य नेतारं..... इत्यादि विशेषणों के द्वारा अर्हन्तदेव को जो वंदन करता है उसके भाव में क्या होता है ?—

- मोक्षमार्ग के नेता को वंदन करनेवाला जीव,
  जिस भाव से मोक्षमार्ग साधेगा, उसी भाव का आदर करेगा;
  जिस भाव से मोक्षमार्ग नहीं सधेगा, उस भाव का आदर नहीं करेगा।
- भेत्तारं कर्मभूभृताम्—ऐसे भगवान को वंदन करनेवाला जीव,
  जिस भाव से कर्म का भेदन होगा, उसी भाव का आदर करेगा,
  जिस भाव से कर्म का बंधन होगा, उस भाव का आदर नहीं करेगा।
- ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां—ऐसे सर्वज्ञ को जो वंदन करे वह जीव,
  सर्वज्ञता का अनुसरण करनेवाली ऐसी ज्ञानचेतना का ही आदर करेगा;
  सर्वज्ञता के रोकनेवाले ऐसे रागादिभावों का आदर नहीं करेगा।
- वन्दे तद्गुणलब्धये —इसप्रकार गुणों के ज्ञानसहित सर्वज्ञ को वंदन करनेवाला वह जीव, अपने रत्नत्रयभाव को प्रगट करता हुआ सर्वज्ञ जैसे गुणों को उपलब्ध करता है।

—यह है मोक्षमार्ग का मंगलाचरण।

आत्मधर्म (उन्नति के पथ पर)

श्री देव-गुरु की मंगल छाया में, जिनवाणी का एक छोटासा प्रतिनिधि जैसा अपना यह 'आत्मधर्म' ३० वर्ष से चल रहा है; परम सौभाग्य से प्राप्त वीरनिर्वाण के ढाई हजारवर्षीय महोत्सव में वह संपूर्ण शक्ति-भक्ति से अपना सहयोग दे रहा है। आत्मधर्म, मात्र संस्था का नहीं, अपितु सारे जैनसमाज के जिज्ञासुओं का प्रिय मासिक है; हिन्दी-गुजराती मिलकर छह हजार से अधिक इसके ग्राहक हैं, और जिनवाणी के रसिक सभी जिज्ञासुओं इसके विकास में अपना सहयोग दे रहे हैं।

आत्मधर्म द्वारा प्रतिपादित आत्महित के उत्तम तत्त्वों को सभी मुमुक्षु जानते ही हैं, एवं उनके अंतर में इस बात का बड़ा गौरव है। उनके सभी के सहकार से आत्मधर्म के प्रचार में बड़ा खर्चा करने में संस्था ने कभी पीछे हठ नहीं की, और न करेगी; कागज-प्रिन्टिंग वगैरह की बड़ी कठिनाईयों के बीच भी सब मिलकर आगे कदम ही करेंगे।

— इसके लिये एक ऐसा विचार माननीय प्रमुखश्री की संमति से किया है कि यदि एक-एक फरमा का खर्चा किसी मुमुक्षु की ओर से दिया जाये तो, महावीर-निर्वाणोत्सव के इस महान वर्ष में हम प्रत्येक अंक में ८ या १६ पृष्ठ अधिक दे सकें—जिसमें विधविध साहित्य भरा हो। एक फरमा का ८ पृष्ठ होता है और करीब ३००० प्रति छपती है। ऐसे एक फरमा का खर्च रुपये ४०० के अंदाज आता है; यह खर्च देने से आपकी ओर से करीब २५००० (पच्चीस हजार) पृष्ठ के वीतरागी साहित्य की प्रभावना होती है, और वीरनाथ के शासन की प्रभावना में भी आप साथ देते हो। आधे फरमे का २०१/ भी दे सकते हैं। जिसकी ओर से जो फोर्म छपेगा, उसमें उसके नाम का उल्लेख भी रहेगा। (माननीय प्रमुखश्री द्वारा मंजूर की हुई यह योजना कम से कम छह नाम आने से प्रारंभ की जायेगी। वर्ष भर में हमें करीब २५ नाम की आवश्यकता है।)

आत्मधर्म के द्वारा अपने परिवार को जो उच्च संस्कार मिल रहा है, वह आप जानते ही हो। तदुपरांत निर्वाण उत्सव का यह वर्ष आपके परिवार को विशेष आनंदित करेगा। आत्मधर्म की उन्नति में साथ-सहकार देनेवाले सभी साधर्मीजनों का हम आभार मानते हैं।

पत्र-व्यवहार का पता : संपादक आत्मधर्म, सोनगढ़ - ३६४२५०

प्रकाशक : श्री दिगम्बर जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट, सोनगढ़ (सौराष्ट्र)
मुद्रक : मगनलाल जैन, अजित मुद्रणालय, सोनगढ़ (सौराष्ट्र)